

वन्यजीव अधिनियम 1972 में और राष्ट्रीय वन्यजीव कार्य योजना (2002-2006) में शामिल किया गया है। पर्यावरण और वन मंत्रालय ने विभिन्न संस्थाओं जैसे 'भारत का वन्यजीव संस्थान' (WII) एवं अन्य वैज्ञानिक/संस्थानों/संगठनों आदि से परामर्श लेने के बाद संरक्षित क्षेत्र तथा बाहरी क्षेत्रों में गंभीर रूप से लुप्त प्राय प्रजातियाँ/परिदृश्यों और पारिस्थितिक तंत्र को बचाने के उद्देश्य के साथ 16 स्थलीय और 7 समुद्री प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा की स्थापना की।

जलीय जैव विविधता एवं संरक्षण

भारत का मीठा जल, नदी मुहाने और समुद्री पारिस्थितिक तंत्र एक समृद्ध जैव विविधता को सहयोग करता है जो मानव के आर्थिक, सांस्कृतिक, पोषण, समाजिक मनोरंजन के साथ-साथ अध्यात्मिक भलाई में योगदान देता है। ये परितंत्र कुछ चमत्कारिक प्रजातियों को समाहित करता है, जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं-

घड़ियाल

घड़ियाल गम्भीर रूप से संकटग्रस्त है (IUCN) और इसे 'वन्य जीव संरक्षण अधिनियम' (1972) के परिशिष्ट-I में सूची बद्ध किया गया है। जंगल में लगभग 1300 जानवरों को छोड़ गया है जिनमें से केवल 200 वयस्क प्रजनन कर रहे हैं। सर्वाधिक बड़ी संख्या जानवरों की भारत के चार क्षेत्रों में पायी गयी, सोन, कटेशनियाघाट गिरवा और चम्बा नदी। भारत में प्रजनन आबादी केवल राष्ट्रीय चम्बल अभयारण्य, काटेरनिया घाट वन्यजीव अभ्यारण्य और कार्बेट टाइगर रिजर्व में ही है। घड़ियाल प्रजाति क्षतिपूर्ति योजना प्रजातियों के समग्र आंकलन से पता चलता है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा घड़ियाल के संरक्षण के लिए तीन राज्यों, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर-प्रदेश में तीन स्तरीय विकेन्द्रीकृत समन्वय तंत्र का गठन किया है।

इरावदी डॉल्फिन

इरावदी डॉल्फिन भारत में चिल्का झील और सुन्दर वन में मिलती है। इनका अवैध शिकार और गिल जाल में दुर्घटना से इनकी संख्या में तीव्र गिरावट हो रही है। 'चिल्का विकास प्राधिकरण' द्वारा किए गये संरक्षण कार्य में इनकी संख्या 2012 में 145 तथा 2003 में 70 की वृद्धि हुई है।

मीठे पानी का कछुआ

कछुए की 28 प्रजातियाँ और मीठे पानी की 21 प्रजातियाँ वैश्विक रूप से संकटग्रस्त हैं। 2 प्रजातियाँ भारत के वन्यजीव संरक्षित अधिनियम-1972 (WPA-1972) में सूचीबद्ध हैं। 12 केलोनियन प्रजातियाँ आर्थिक पैमाने पर इकट्ठी या पकड़ी जा रही हैं और बहुमत सी अन्य जीविका या निर्वाहन के लिए शोषण किया जा रहा है कई प्रजातियों के क्षति के लिए स्थानीय लोग जिम्मेदार हैं जिससे कछुओं का प्रजनन कम होता जा रहा है। 'परियोजना कचुगा (Kachuga)' 'मद्रास क्रोकोडाइल बैंक ट्रस्ट' और 'तरतल सरवाहवल एलाइंस' के साझा कार्यक्रम के अन्तर्गत भारत में मीठे पानी के कछुओं के लिए संरक्षण योजना के लिए कदम उठाये गये हैं। इस प्रोग्राम के अन्तर्गत पाँच प्राथमिक वाले कछुए स्थलों में प्रभावी संरक्षण योजना को लागू किया गया है।

समुद्री कछुआ

सर्वेक्षण के अनुसार समुद्री कछुओं में से 5 वैश्विक महत्व के भारतीय उपमहाद्वीपीय क्षेत्रों में पाये गये हैं। जिनमें ओलिव रिडले, ग्रीन, लेदरबैक, हॉक्सबिल, लॉगरहेड (Loggerhead) है। लॉगरहेड को छोड़कर बाकी 4 प्रजातियाँ भारतीय तटरेखा में घोंसला बनाने के लिए जाने जाते हैं। भारत में पूर्वी एवं पश्चिमी तट रेखा स्थल ओलिव रिडले कछुओं के घोंसले वैश्विक महत्व के हैं, जिनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण उड़ीसा के दो जिले गहरिमाथा और रुशिकुल्या हैं। इन दोनों स्थलों के साथ उड़ीसा के 'देवी' स्थान के साथ प्रत्येक वर्ष यहाँ हजारों लाखों की संख्या के कछुए अपने घोंसले बनाते हैं, हालांकि बड़े रूप में पिछले 15 वर्षों से देवी स्थान को सर्वेक्षण नहीं किया गया। लेदरबैक ग्रेट और लिटिल निकोबार द्वीप और लिटिल अंडमान तक, ग्रीव कछुए के घोंसले गुजरात, लक्षद्वीप और अण्डमान निकोबार तक ही सीमित है। हरे कछुओं के लिए गल्फ ऑफ मन्नार, लक्षद्वीप और अण्डमान निकोबार क्षेत्रा भोजन के लिए भी महत्वपूर्ण है। भारतीय महाद्वीप विश्व में सामान्य रूप समृद्धी जैवविविधता के संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण तो है विशेषरूप से कछुओं के संरक्षण के लिए। धरातलीय तटों में आज बहुत सी मानवीय आर्थिक क्रियाएँ इन कछुओं की आबादी पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। भारत ने अभी हाल ही में ओलिव टिडले कछुओं की तथा उनके घोंसलों की व्यापक निगरानी सर्वेक्षण किया

जिससे मानवीय क्रियाओं और जलवायु परिवर्तन का प्रभाव इनकी संख्या और लिंगानुपात का आकलन किया गया। सभी 5 समुद्री कछुओं की प्रजाति जो भारतीय तटों में पाये जाते हैं 'भारतीय वन्यजीव संरक्षण अधिनियम-1972 के अनुसूची-1 के अन्तर्गत सूचीबद्ध है, वैसे ही जैसे सी.आई.टी.एस.) (Conservation on International Trade in Endangered Species) के परिशिष्ट-1 के अन्तर्गत वन्य जीव और वनस्पति जो कछुओं के व्यापार तथा उनके उत्पादों का भी व्यापार प्रतिबन्धित है जिन देशों ने भी इस सन्धि के तहत हस्ताक्षर किया हुआ है। भारत में वर्तमान में समुद्री कछुओं का कोई भी व्यापार नहीं होता है। फिर भी दुर्घटना वश ट्राउल जाल में फांस कर इनकी मृत्यु सर्वविदित है, 10000 से भी अधिक कछुए प्रत्येक वर्ष अकेले उड़ीसा के तटीय क्षेत्रों में लहरों के कारण तटों में आकर मर जाते हैं। समुद्री कछुए को पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के आई.डी.डब्ल्यू.एच. कार्यक्रम के सतह भी जोड़ा गया है। जिससे कछुओं के आवास समावेसी और प्रभावी संरक्षण के लिए लोगों की भी भूमिका को सुनिश्चित किया जा सके।

काला हिरण

ब्लैकबक (एंटीलोप सर्वाइकैप), जिसे भारतीय मृग के रूप में भी जाना जाता है, भारत, नेपाल और पाकिस्तान में पाया जाने वाला एक मृग है। ब्लैकबक घास के मैदानों और थोड़ा जंगलों में बसा हुआ है। पानी की उनकी नियमित आवश्यकता के कारण, वे उन क्षेत्रों को पसंद करते हैं जहां पानी बारहमासी उपलब्ध है।

एंटीलोप मूल रूप से भारत में पाया जाता है और मुख्य रूप से पाया जाता है। व्यापक रूप से, केवल छोटे, बिखरे हुए झुंड आज देखे जाते हैं, जो मुख्य रूप से संरक्षित क्षेत्रों तक ही सीमित हैं। 20वीं शताब्दी के दौरान, अत्यधिक शिकार, वनों की कटाई और आवास की गिरावट के कारण ब्लैकबक की संख्या में तेजी से गिरावट आई। भारत में, 1972 के वन्यजीव संरक्षण अधिनियम की अनुसूची-I के तहत ब्लैकबक का शिकार प्रतिबन्धित है।

ब्लैकबक एंटीलोप भारत में तेजी से चल रहा भूमि पशु है, जो मूल रूप से भारत के घास के मैदानों में पाया जाता है। भारतीय एंटीलोप वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1972 के तहत

अपने जीनस का एकमात्र सदस्य है और संरक्षित है।

ब्लैकबक नेशनल पार्क, गुजरात

गुजरात के वेलवदर में ब्लैकबक नेशनल पार्क भारतीय चीता के लिए एक प्रसिद्ध शिकारगाह था। आज, पार्क भारतीय मृगों, धारीदार लकड़बग्घों, भारतीय भेड़िया और हर पक्षी के झुंडों का घर है।

ताल छापर अभ्यारण्य, राजस्थान

राजस्थान के चूरू जिले में ताल छापर अभ्यारण्य अपनी ब्लैकबक्स आबादी के लिए जाना जाता है और विभिन्न प्रकार के पक्षियों का घर भी है।

रानीबेनूर ब्लैकबक अभ्यारण्य, कर्नाटक

रानीबेनूर ब्लैकबक अभ्यारण्य ब्लैकबक मृग के लिए एक संरक्षित क्षेत्र है और अत्यधिक लुप्तप्राय महान भारतीय बस्टर्ड और भारतीय भेड़िया द्वारा बसा हुआ है। अभ्यारण्य दक्षिण भारत में बड़ी संख्या में ब्लैकबक और भेड़िया आबादी के लिए जाना जाता है।

जयमंगली ब्लैकबक रिजर्व, कर्नाटक

कर्नाटक के तुमकूर जिले के पास जयमंगली ब्लैकबक रिजर्व दक्षिण भारत में ब्लैकबक की दूसरी सबसे बड़ी आबादी है।

रेहेखुरी ब्लैकबक अभ्यारण्य, महाराष्ट्र

अहमदनगर के पास रेहेकुरी ब्लैकबक अभ्यारण्य भारत में ब्लैकबक्स को देखने के लिए सबसे प्रसिद्ध अभ्यारण्य में से एक है। मयूरेश्वर अभ्यारण्य के साथ रेहेखुरी अभ्यारण्य महाराष्ट्र में ब्लैकबक और चिकारा आबादी के लिए जाना जाता है।

वलनाडु वन्यजीव अभ्यारण्य, तमिलनाडु

तमिलनाडु के वलनाडु में ब्लैक बक वन्यजीव अभ्यारण्य दक्षिण भारत में ब्लैकबक मृग के संरक्षण के लिए बनाया गया है। अभ्यारण्य में काले नैण्ड हरे, टेढ़े मेढ़े और चित्तीदार हिरण का घर भी है।

रोलपाडु वन्यजीव अभ्यारण्य, आंध्र प्रदेश

आंध्र प्रदेश के कुर्नूल जिले में रोलपडू वन्यजीव अभ्यारण्य महान भारतीय बस्टर्ड और विभिन्न प्रकार के एविफैनल प्रजातियों का सबसे प्रसिद्ध निवास स्थान है। अभ्यारण्य का घास का मैदान पारिस्थितिकी तंत्र दक्षिण भारत में अच्छी ब्लैकबक आबादी के लिए जाना जाता है।

एटनागरम वन्यजीव अभ्यारण्य, तेलंगाना

एटनागरम वन्यजीव अभ्यारण्य, एटनागरम गाँव में स्थित शानदार वन्यजीवों के लिए जाना जाता है। अभ्यारण्य अद्वितीय वनस्पतियों और जीवों का घर है, जिसमें गोल्डन जैकाल, ढोले, भेड़िया और हिरण और मृग की 6 प्रजातियाँ शामिल हैं।

ओलिव रिडले कछुए

ओलिव रिडले कछुए दुनिया के सबसे छोटे और सबसे प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले समुद्री कछुए हैं, जो प्रशांत, अटलांटिक और भारतीय महासागरों के गर्म पानी में रहते हैं। इस प्रजाति को IUCN रेड सूची द्वारा कमजोर के रूप में पहचाना जाता है।

भारत में उड़ीसा का तट ओलिव-रिडले के लिए सबसे बड़ा सामूहिक घोंसला बनाने वाला स्थल है, जिसके बाद मेक्सिको और कोस्टा रिका के तटों का विस्तार होता है। डब्ल्यूडब्ल्यूएफ - इंडिया, मछुआरों के समुदाय के साथ, उड़ीसा के रशिकुलाया में बड़े पैमाने पर घोंसले के शिकार स्थल पर ओलिव रिडली भट्टी की रक्षा करने में शामिल रहा है, घोंसले के शिकार क्षेत्र से बाहर निकलकर और इसे गश्त करने के लिए और एक सुरक्षित मार्ग सुनिश्चित करने के लिए समुद्र है।

कछुओं की अमित्र मछली पकड़ने की प्रथा, बंदरगाहों और पर्यटन केंद्रों के लिए घोंसले वाले समुद्र तटों के विकास और शोषण जैसी मानवीय गतिविधियों के कारण ओलिव-रिडले अपने प्रवासी मार्ग, निवास और घोंसले के समुद्र तटों पर गंभीर खतरों का सामना करते हैं। हालांकि इन कछुओं और उनके उत्पादों पर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार CITES परिशिष्ट-I के तहत प्रतिबंधित है, लेकिन वे अभी भी अपने मांस, खोल और चमड़े के लिए बड़े पैमाने पर अवैध हैं, और उनके अंडे, हालांकि फसल के लिए अवैध, तटीय क्षेत्रों के आसपास काफी बड़ा बाजार है।

एशियाई शेर

उन्होंने पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने गुरुवार को एशियाटिक लायन और उससे जुड़े पारिस्थितिकी तंत्र की मुक्त आबादी वाले विश्व की अंतिम रक्षा और संरक्षण के उद्देश्य से 'एशियाई शेर संरक्षण परियोजना' शुरू की।

गिर में एक मालगाड़ी द्वारा तीन एशियाई शेरों को चलाने के दो दिन बाद यह फैसला आया।

यहाँ परियोजना की मुख्य विशेषताएं हैं:

1. इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य दुनिया के अंतिम मुक्त एशियाई शेरों की आबादी और इससे जुड़े पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के लिए काम करना है।
2. मंत्री ने कहा कि अगले तीन वर्षों के लिए परियोजना का कुल बजट केंद्रीय और राज्य के हिस्से के लिए 60:40 के योगदान अनुपात के साथ एक केन्द्र प्रायोजित योजना, वन्यजीव पर्यावास के विकास के माध्यम से वित्त पोषित किया जाएगा।
3. 'एशियाई शेर संरक्षण परियोजना अत्याधुनिक तकनीकों, नियमित वैज्ञानिक अनुसंधान अध्ययन, रोग प्रबंधन, आधुनिक निगरानी तकनीकों की मदद से एशियाई शेर के संरक्षण और वसूली के लिए चल रहे उपायों को मजबूत करेगी।' हर्षवर्धन ने एक समीक्षा बैठक में कहा।
4. यह भारत में एक स्थिर और व्यवहार्य शेर आबादी सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त पर्यावरण-विकास कार्यों के साथ पूरक होगा।
5. 1890 के अंत तक गुजरात के गिर के जंगलों में 50 से कम शेर बच गए, मंत्रालय ने एक बयान में कहा, 'राज्य सरकार और केंद्र द्वारा समय पर और कड़े सुरक्षा के साथ, एशियाई शेरों की वर्तमान आबादी में वृद्धि हुई है' 500 से अधिक।
6. एशियाई शेर जो कभी पूर्वी भारत में नारस (ईरान) से लेकर पलामू तक थे, अंधाधुंध शिकार और निवास स्थान के नुकसान से विलुप्त हो गए थे।
7. 1890 के अंत तक गुजरात के गिर के जंगलों में 50 से कम शेरों की एक आबादी बनी रही। राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा कठोर सुरक्षा की पेशकश के साथ, एशियाई शेरों की संख्या 500 से अधिक हो गई है।
8. 2015 की जनगणना ने 1648.79 वर्ग किमी के गिर संरक्षित क्षेत्र नेटवर्क में 523 एशियाई शेरों की आबादी को दिखाया। एशियाई शेर भारत में एक पैंथेरा लियो लेओ आबादी है। इसकी सीमा गिर राष्ट्रीय उद्यान और भारतीय राज्य गुजरात में पर्यावरण तक सीमित है। IUCN रेड लिस्ट में इसे इसके पूर्व

वैज्ञानिक नाम पैथेरा लियो पर्सिका के तहत सूचीबद्ध किया गया है क्योंकि यह अपने छोटे आकार और अधिभोग के क्षेत्र के कारण लुप्तप्राय है। मई 2015 में, 14वीं एशियाई शेर की जनगणना लगभग 20,000 किमी² (7,700 वर्ग मील) के क्षेत्र में आयोजित की गई थी, सिंह की आबादी 523 थी। अगस्त 2017 में, एक समान जनगणना में 650 जंगली व्यक्तियों का पता चला।

गिर वन में, 1,412.1 किमी² (545.2 वर्ग मील) का क्षेत्र 1965 में एशियाई शेर संरक्षण के लिए एक अभयारण्य के रूप में घोषित किया गया था। यह अभयारण्य और पश्चिमी भारत के सौराष्ट्र में आस-पास के क्षेत्र, एशियाई शेर का समर्थन करने वाले एकमात्र जंगली आवास हैं। 1965 के बाद, 258.71 किमी² (99.89 वर्ग मील) के क्षेत्र के साथ एक राष्ट्रीय उद्यान स्थापित किया गया था जहां मानव गतिविधि की अनुमति नहीं है। पांच संरक्षित क्षेत्र वर्तमान में एशियाई शेर की रक्षा के लिए मौजूद हैं। गिर अभयारण्य, गिर राष्ट्रीय उद्यान, पनिया अभयारण्य, मितियाला अभयारण्य, और गिरनार अभयारण्य। पहले तीन संरक्षित क्षेत्र गिर संरक्षण क्षेत्र वन ब्लॉक बनाते हैं जो एशियाई शेरों के मुख्य आवास का प्रतिनिधित्व करता है। अन्य दो अभयारण्य, मितियाला और गिरनार, गिर संरक्षण क्षेत्र के फैलाव के भीतर उपग्रह क्षेत्रों की रक्षा करते हैं। गिर शेरों के लिए वैकल्पिक घर के रूप में सेवा करने के लिए पास के बर्दा वन्यजीव अभयारण्य में एक अतिरिक्त अभयारण्य स्थापित किया जा रहा है।

डगोंग (Dugong)

डगोंग आई.यू.सी.एन. में अति संवेदनशील तथा डब्ल्यू.पी.ए. के अनुसूची एक में संरक्षित घोषित है। डगोंग गल्फ ऑफ मन्नार, कच्छ की खाड़ी, अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह में पायी जाती है। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने आई.डी.डब्ल्यू.एच. योजना के तहत प्रजाति क्षतिपूर्ति संघटक के अन्तर्गत डगोंग की संख्या में वृद्धि तथा उसके आवास के अवनयन होने से बचाने के लिए योजना शुरू की है। अप्रैल 2008 में भारत सरकार ने जन्तुओं एवं प्रवासी प्रजातियों के संरक्षण सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यु.एन.ई.पी.) के साथ वापन समझौते पर हस्ताक्षर किये। समझौते का उद्देश्य भारत में डगोंग वर्तमान स्थिति में सुधार से था जिसमें उसकी संख्या संरक्षण और आवासीय प्रबन्ध अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की सहयोग से करना था।

संकटग्रस्त पादप प्रजातियाँ और उनके आवास की स्थिति और संरक्षण

हालाँकि देश में महत्वपूर्ण प्रयासों से आरक्षित और संरक्षित क्षेत्र का एक मजबूत और विस्तृत संजाल तैयार हुआ है। अभी भी संरक्षित आवासों के बाहर बहुत सी ऐसी अद्वितीय वनस्पतियाँ और पौधे हैं जो मानवीय क्रियाओं की भारी दबाव का सामना कर रहे हैं। उच्च संकटग्रस्त पादप और उनके आवासों को संरक्षण और पुनः प्राप्ति के लिए भारत के विभिन्न जैवभौगोलिक क्षेत्रों के पर्यावरण सूचना प्रणाली के सरकारी विज्ञप्ति “विशेष आवास और भारत के संकटग्रस्त पादप” के माध्यम से योजना की सूचना दी गयी (रावत-2008)

मिरिस्टिका दलदल (Myristica Swamps)

यह मीठे पानी एक प्रकार का जल एवं स्थल जैसी विशेषताओं वाले (दलदल) झील जैसी जिसमें मिरिस्टिका जंगल और प्रजातियों का विकास हुआ है दूसरी विशेषता यह है कि वह पृथ्वी सबसे पुराने पुष्पीय पौधों का स्थान है। यह भारत में दो स्थानों में पाये जाते हैं उत्तर भारत में उत्तराखण्ड में तथा दक्षिण भारत में कर्नाटका और केरल में। ये वे दलदल 1988 में चर्चा में आये जब ‘रोजर्स’ और ‘पनवार’ ने भारत के पारिस्थितिक तंत्र में सबसे संकटग्रस्त जंगल के रूप में व्याख्यापित किया गया। निरिस्टिका दलदल प्राचीन प्रजातियों के पादपों का एक जीवित संग्रहालय जैसा है।

साइकेड्स (Cycads)

ये पृथ्वी पर सबसे प्राचीन बीजीय पौधों के अवशेष हैं। ये लगभग पूर्व कार्बोनीफेरस कल (300-325000000 वर्ष पहले) के हैं। भारत में इस प्रकार की वनस्पति दक्षिणी पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट, बिहार, उत्तर पूर्वी राज्यों और अण्डमान निकोबार द्वीप समूहों में पायी जाती है। ये मुख्य रूप से औषधीय और अन्य पदार्थिक रूप में उपयोग किये जा रहे हैं। साइकेड्स को वर्तमान में बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इसको दोनो विविधियों में संरक्षण की आवश्यकता है एम्स-सीटू तथा इन-सिटू। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने अपने ‘आल इण्डिया क्वार्टिनेटेड प्रोजेक्ट ऑन टैक्सोनामी’ के अन्तर्गत कार्यशालाओं के माध्यम से इन पौधों के संरक्षण और विकास के लिए लोगों को विशेषकर ग्रामीण समुदायों को तथा साथ ही वैज्ञानिक अध्ययन में विस्तृत भूमिका की कार्य योजना चला रहा है।

रोडेनड्रॉन (Rhodendron)

यह Ericaceal परिवार के अन्तर्गत आता है जो भारत में विभिन्न जैव भौगोलिक क्षेत्रों में 92 प्रजातियों तथा 8 उप-प्रजातियाँ 9 किस्मों को प्रस्तुत करता है। यह हिमालय के संदर्भ में की स्टोन' तत्व है (Singhet 2009-2010) पूर्वी हिमालय इस वनस्पति से सर्वाधिक संपन्न है। जहाँ इसकी 10 प्रजातियाँ पायी जाती है जिनमें 6 स्थापना की है 'क्योगनेस्ला एल्पाइन अभ्यारण्य' और मीनम वन्यजीव अभ्यारण्य जो रोडेनड्रॉन संरक्षण के लिए जाने जाते हैं। (Singh et. 2009)

पिचर प्लांट (Pitcher Plant)

भारत में 'नेपेन्थीस खसियाना' (Nepenthes Khasiana) के एक मात्र नेपेन्थीस जाति को प्रस्तुत करता है। यह सी.आई.टी. ई.एम. के द्वारा परिशिष्ट-1 में दुर्लभ संकटकग्रस्त श्रेणी में सूचीबद्ध है। यह भारत में आई.यू.सी.एस. के द्वारा भी वनस्पति उद्यान में दुर्लभ और संकटकग्रस्त प्रजाति के रूप में शामिल है। यह मेघालय में एक स्थानीय प्रजाति के रूप में गारो, खासी ज्यन्तियाँ पहाड़ियों में 1000-1500 मी. की ऊँचाई तक पाये जाते हैं। स्थानीय लोग और जनजातिय समूह इसको औषधीय उपयोग के द्वारा अपनी आर्थिक जरूरतों को पूरा करते हैं। बहुत सी मानवीय क्रियाएँ और प्रदूषणों की वजह से दिन-ब-दिन इनकी प्रजातियों में गिरावट हो रही है इसलिए बहुत सी संस्थाएँ जैसे 'सेन्टर फॉर एडवान्स स्टडी इन बोटनी' (यह एक नार्थ-ईस्टर्न हिल यूनीवर्सिटी है), 'नेशनल आर्थिडेटिपम' (शीलांग) 'द एक्सपेरीमेंटल गार्डन ऑफ द वोटनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया' और पर्यावरण एवं मंत्रालय ने एम्स-सिटू और इन-सिटू संरक्षण माध्यम से इनके संरक्षण के लिए कदम उठाया है (घोस एण्ड घास 2012)।

साइट्रस (Citrus)

इसको भारत का स्थानीय और विश्व का एक मात्र उत्पत्ति का केन्द्र के रूप में जाना जाता है वर्तमान में विविध आनुवांशिक विविधता के साथ उपस्थित है। यह भारत का तीसरा सबसे बड़ा कृषीय फल है। भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में सर्वाधिक विविध प्रजातियाँ पायी जाती है। भारत में पायी जाने वाली समस्त प्रजातियों को आई.यू.सी.एन. ने संकट ग्रस्त घोषित किया है। संयुक्त राष्ट्र के मैन एण्ड बायोस्फियर रिजर्व प्रोग्राम के तहत

पर्यावरण और वन मंत्रालय के सहयोग से 1981 में राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो ने साइट्रस जर्मप्लास्ट के जंगल में ही संरक्षण के लिए मेघालय के गारो हिल्स में स्थापित नॉकटेक बायोस्फियर रिजर्व के बफर जोन में लगभग 10,266 हेक्टेयर क्षेत्र में साइट्रस जीन अभ्यारण की स्थापना की गयी।

जैव विविधता ऋास के कारण

जैव विविधता मानव जीवन का आधार है। आदिम अवस्था से ही मनुष्य की निर्भरता प्रकृति पर ही है। चूँकि मानव सभ्यता की शुरुआत जंगलों से हुई है। अतः मनुष्य ने बड़ी संख्या में वन्य जीवों एवं वनस्पतियों को अपने जीवन का आधार बनाया। बढ़ती आबादी और विकास की अंधी दौड़ के कारण हमारे पारिस्थितिक तंत्र जैविक और अजैविक दबाव निरन्तर बढ़ रहे हैं। फलतः जैव विविधता का हास हो रहा है और भोजन तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं की बढ़ती माँग की पूर्ति में बाधाएँ सामने आ रही है। जैव विविधता के हास का सबसे गंभीर रूप प्रजातियों का विलोपन है। जैव विविधता के हास के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं-

1. वनों का विनाश

आबादी का दबाव बढ़ने के कारण शहर ही नहीं गाँव भी बढ़े हैं। इस वजह से जंगल सिकुड़े हैं, जो कि जैव विविधता के प्राकृतिक केन्द्र होते हैं। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इनका अधिकाधिक दोहन किया। यह स्थिति जैव विविधता के लिये घातक सिद्ध हुई है और जैव विविधता के हास का कारण बनी है।

2. आवासों का विनाश

विश्व में जैव विविधता हास का प्रमुख कारण शताब्दी में किया गया उनकी आवासों का विनाश है। एशिया के उष्ण कटिबंधीय देशों में 65 प्रतिशत वन्य जीवों के आवास नष्ट कर दिये गये हैं। इनमें विशेषतः बांग्लादेश (94%), हांगकांग (95%) श्रीलंका (85%), वियतनाम (80.) प्रमुख है। विश्व में वन, आर्द्र भूमि तथा अन्य बड़े जैविक सम्पन्नता वाले पारिस्थितिक तंत्र मानव जनित कारणों से लाखों प्रजातियों के विलुप्त होने की समस्या से जूझ रहे हैं। आवासों का विनाश करके हमने न केवल प्रमुख जातियों को विलुप्त किया है वरन् अनेक ऐसी जातियों का भी विलोपन कर दिया है। जिनसे हम आज तक अवगत नहीं थे।

3. वन्य जीवों का अवैध शिकार

वन्य जीवों के अवैध शिकार से भी स्थिति बिगड़ी है। वन्य जीवों की खाल, सींग, हड्डी, खुर, दांत आदि का औषधीय महत्व होने के कारण इनका शिकार किया जाता है। एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के विकासशील देशों में पायी जाने वाली सम्पन्न जैव विविधता आज विश्व में वन्य जीवों एवं जन्तु उत्पादों की मुख्य स्रोत बन रही है। शिकार की वजह से जहाँ अनेक जीव लुप्त होते जा रहे हैं, वहीं पारिस्थितिकीय तंत्र भी क्षतिग्रस्त हो रहा है।

4. प्रदूषण

बढ़ते प्रदूषण से भी जैव विविधता का ह्रास हुआ है। सागरीय प्रदूषण द्वारा प्रवाल प्रजातियाँ प्रभावित हुई हैं। कृषि कार्यों में प्रयोग किये जाने वाले कीटनाशकों का प्रयोग फसलों की कीटों से बचाने के लिये किया जाता है, किन्तु ये कीटनाशक जैव विविधता की दृष्टि से महत्वपूर्ण पक्षियों जैसे- मोर, बाज, चील, गौरैया आदि की मौत का कारण बनते हैं। रासायनिक तत्व पोषण स्तर-1 में प्रवेश कर द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ पोषण स्तरों तक पहुँच जाते हैं। ये सभी पोषण स्तरों में हानिकारक प्रभाव उत्पन्न करते हैं। फलस्वरूप जैव-विविधता की तीव्र गति से क्षरण हो रहा है। एक शोध के उपरान्त पाया गया है कि गिद्ध कीटनाशकों के प्रयोग के कारण विलुप्त हुआ है क्योंकि पशुओं के शरीर में संचित कीटनाशकों का वह भक्षण करता था।

5. विदेशी प्रजातियों का आक्रमणकारी प्रभाव

यद्यपि विभिन्न मानकीय गतिविधियों के कारण जैव विविधता का ह्रास हुआ है लेकिन बाहरी प्रजातियों के प्रवेश से भी इसमें हानि हुई है। यूरोपीय औपनिवेशीकरण, बागवानी, कृषि विकास तथा आकस्मिक परिवहन इसके प्रमुख कारण हैं, यद्यपि अनेक प्रजातियाँ स्थापित नहीं हो पाईं लेकिन फिर भी इनमें से कुछ प्रजातियों के आक्रमण का भी प्रभाव पड़ा है।

राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य

‘कान्फ्रेंस ऑन पार्टिज’-11(COP-11) ने सी.बी.डी. से राष्ट्रीय और प्रादेशिक स्तर पर लक्ष्य निर्धारण करने को कहा है, जैवविविधता के लिए महत्वपूर्ण योजना (SP) का प्रयोग करते एक तथा राष्ट्रीय प्रथमिकता और क्षमता के अनुसार एक लचीला फ्रेमवर्क की आवश्यकता है। पार्टियों को उनके NSBAPs

नेशनल बायोडिवर्सिटी स्ट्राटजी एण्ड एम्सन प्लान’ (जो भारत के संदर्भ में राष्ट्रीय जैवविविधता कार्य योजना) तथा जैव विविधता के लिए महत्वपूर्ण योजना (SP) की बातों को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त और संशोधित समीक्षा की आवश्यकता है। भारत ने उनके NBSAPs के प्लान को सम्मिलित करते हुए तथा COP-12 की रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए 2008 में ही अपना राष्ट्रीय जैव विविधता कार्य योजना तैयार किया था, और यह निर्णय लिया गया था कि भारत को अपनी राष्ट्रीय जैव विविधता कार्य योजना को पूरी तरह बदलने और संशोधित करने की आवश्यकता नहीं लेकिन राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य को अद्यतनीकरण करने के लिए अड़ची जैवविविधता के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए ढांचे को विकसित करने की आवश्यकता है।

एन.बी.ए.पी को अद्यतनीकरण की प्रक्रिया

उपर्युक्त उल्लेखित विचार को सम्मिलित करते हुए राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य को अद्यतनीकरण की आवश्यकता है, 12 राष्ट्रीय जैवविविधता लक्ष्य सम्मिलित सूचकों, निगरानी संजाल ‘आइची जैवविविधता लक्ष्य’ (Aichi Biodiversity Targets) को प्राप्त करने के लिए एक रोड मैप को विकसित किया गया है। ये राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य मंत्रालयों/विभागों तथा राज्य जैवविविधता बोर्ड और कार्यक्रम के पुनरक्षक तथा साझेदारों और सहयोगियों के साथ विचार-विमर्श की लम्बी बैठकों पर आधारित है।

आइची या एची जैव विविधता लक्ष्य

(Aichi Target)

जापान के रूची प्रांत में 2010 में COP-10 की बैठक में C.B.D. के लिए जिन लक्ष्यों को संकल्पित किया गया उन्हें ‘रूची जैवविविधता’ के ने माना जाना गया। लक्ष्य की सीमा को 2020 तक सीमित किया गया।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय नवम्बर 2011 में सम्बन्धित मंत्रालयों/विभागों के साथ एक उच्च स्तरीय बैठक के माध्यम से राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य तैयार करने की प्रक्रिया शुरू की। राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य की चर्चा और संचार पर्यावरण और वन मंत्रालय के सहयोग से नई दिल्ली में 30 जनवरी 2014 और फरवरी 2014 के बीच आयोजित सातवें सीएमएस वातावरण अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण और अन्य जीव फिल्म समारोह में भी किया गया। जहाँ अब 12 राष्ट्रीय जैवविविधता लक्ष्य को अवधारणात्मक किया गया वही देश एक लम्बे समय के लिए

बहु उद्धारक भागीदारी के साथ अपनी अनूठी जैव विविधता के संरक्षण पर कार्य कर रहा है।

| राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य के सूचक | |
|--------------------------------------|--|
| सूचकों संख्या | राष्ट्रीय जैवविविधता की लक्ष्य |
| 7 | 2020 तक देश की महत्वपूर्ण आबादी के अनुपात को, विशेषकर युवाओं को जैव विविधता के मूल्यों और इसके स्थिरता और संरक्षण के लिए वे क्या कदम उठा सकते हैं। |
| 9 | 2020 तक, जैव विविधता के मूल्यों को राष्ट्रीय और राज्य योजना प्रक्रियाओं और गरीबों उन्मूलन की रणनीतियों का एकीकरण। |
| 16 | गिरावट, विखंडन और सभी प्राकृतिक निवास के नुकसान की दर को कम करने के लिए रणनीति को पर्यावरण सुधार और मानवीय कल्याण के लिए 2020 तक, अन्तिम रूप दिया जा रहा है। |
| 2 | 2020 तक, आक्रामक विदेशी प्रजातियों और उनके रास्तों की पहचान कर उनकी विकास तथा उनकी आबादी को प्रतिबंधित करने की रणनीति को प्रथमिकता में शामिल करना है। |
| 23 | 2020 तक, कृषि, वानिकी और मछली पालन के सतत् प्रबंधन के लिए उपायों को अपनाना। |
| 14 | स्थलीय और अंतर्देशीय जल के अन्तर्गत पारिस्थितिकीय प्रप्रतिनिधित्व क्षेत्र |

भारत की राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य

भारत के 12 राष्ट्रीय जैव विविधता लक्ष्य हैं:

- 2020 तक, देश का एक महत्वपूर्ण अनुपात जनसंख्या, विशेष रूप से युवाओं, के बारे में पता है जैव विविधता के मूल्य और वे जो कदम उठा सकते हैं संरक्षण और इसे लगातार उपयोग करें।
- 2020 तक, जैव विविधता के मूल्यों को एकीकृत किया जाता है राष्ट्रीय और राज्य नियोजन प्रक्रियाएँ, विकास कार्यक्रम और गरीबी उन्मूलन रणनीति।
- गिरावट की दर को कम करने के लिए रणनीतियाँ, विखंडन और सभी प्राकृतिक आवास के नुकसान हैं दसप्रमक और

कार्यों के लिए 2020 तक जगह में डाल दिया पर्यावरणीय परिशोधन और मानव कल्याण।

- 2020 तक, आक्रामक विदेशी प्रजातियाँ और रास्ते हैं उन्हें विकसित करने के लिए पहचान और रणनीति इतना है कि प्राथमिकता आक्रामक विदेशी की आबादी प्रजातियों का प्रबंधन किया जाता है
- 2020 तक, टिकाऊ के लिए उपायों को अपनाया जाता है कृषि, वानिकी और शेरों का प्रबंधन।
- स्थलीय के तहत पारिस्थितिक रूप से प्रतिनिधि क्षेत्र और अंतर्देशीय पानी, और तटीय और समुद्री क्षेत्र, विशेष रूप से प्रजातियों के लिए विशेष महत्व के, जैव विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं, संरक्षित हैं संरक्षित क्षेत्र के आधार पर प्रभावी और समान रूप से पदनाम और प्रबंधन और अन्य क्षेत्र-आधारित संरक्षण उपायों और में एकीकृत कर रहे हैं 20% से अधिक व्यापक परिदृश्य और समुद्र के किनारे, देश के भौगोलिक क्षेत्र में, 2020 तक।
- 2020 तक, संवर्धित पौधों की आनुवंशिक विविधता, खेत पशुधन, और उनके जंगली रिश्तेदार, सहित अन्य सामाजिक-आर्थिक रूप से और सांस्कृतिक रूप से भी मूल्यवान प्रजातियाँ, बनाए रखी जाती हैं, और रणनीतियाँ होती हैं कम से कम करने के लिए विकसित और कार्यान्वित किया गया है आनुवंशिक क्षरण और उनके आनुवंशिक की सुरक्षा विविधता।
- 2020 तक, पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं, विशेष रूप से उन पानी से संबंधित, मानव स्वास्थ्य, आजीविका और भलाई, गणना और सुरक्षा के उपाय हैं उनकी जरूरतों को ध्यान में रखते हुए उनकी पहचान की जाती है महिलाओं और स्थानीय समुदायों, विशेष रूप से गरीबों और कमजोर वर्ग।
- 2015 तक, आनुवंशिक संसाधनों तक पहुंच और नागोया प्रोटोकाल के अनुसार, बेनेट के उचित और समान शेयरिंग उनके उपयोग से उत्पन्न होते हैं परिचालन, राष्ट्रीय कानून के अनुरूप।
- 2020 तक, एक प्रभावी, भागीदारी और अद्यतन राष्ट्रीय जैव विविधता कार्य योजना को क्रियाशील बनाया गया है शासन के विभिन्न स्तरों पर।
- 2020 तक, समुदायों का उपयोग करके राष्ट्रीय पहल जैव विविधता से संबंधित पारंपरिक ज्ञान हैं इसे बचाने की दृष्टि से मजबूत हुआ राष्ट्रीय विधान के अनुसार ज्ञान और अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों।

- 2020 तक उपलब्धता बढ़ाने के अवसरवित्तीय, मानव और तकनीकी संसाधनों के लिए सामरिक के प्रभावी कार्यान्वयन की सुविधा जैव विविधता 2011-2020 और राष्ट्रीय के लिए योजना लक्ष्य की पहचान की जाती है और संसाधन के लिए रणनीति मोबिलाइजेशन को अपनाया जाता है।

भारत जैव विविधता का केंद्र है। भारत में दुनिया में जंगली बाघों की आबादी लगभग दो है। 1968 में शेर की आबादी 177 से बढ़ गई है 2015 में 520 से अधिक, और 12,000 से हाथी 2015 से 2015 में 30,000 तक। एक-सींग वाला इंडियन राइनो जो जल्दी के दौरान विलुप्त होने के कगार पर था 20 वीं सदी, अब 2,400 नंबर। भारत अग्रणी है जैव विविधता के संरक्षण में वैश्विक प्रयास।

सी.बी.डी. (Convention on Biological Diversity)

सीबीडी जैव-विविधता से संबंधित एक अन्तर्राष्ट्रीय संधि है जिसमें पहली बार जैव-विविधता के सभी पहलुओं पर ध्यान दिया गया है। 184 सदस्यों वाली यह संधि आर्थिक विकास के साथ पारिस्थितिकी संतुलन बनाये रखने के लिये भी प्रतिबद्ध है। भारत भी सीबीडी का एक सदस्य है तथा इसने 5 मई, 1992 को इस संधि पर हस्ताक्षर किया। भारत ने 19 मई, 2004 को इसे अनुमोदित किया। इस संधि की शर्तों के पालन हेतु भारत ने जैव-विविधता अधिनियम, 2002 के अन्तर्गत 1 अक्टूबर, 2003 को चेन्नई में एक राष्ट्रीय जैव-विविधता प्राधिकरण स्थापित किया। अधिनियम का अनुपालन करते हुये 18 राज्यों में राज्य जैव-विविधता बोर्डों की स्थापना की जा चुकी है और अन्य राज्यों में यह प्रक्रिया जारी है।

क्या है कांफ्रेंस ऑफ पार्टीज (सीओपी)?

कांफ्रेंस ऑफ पार्टीज (कोप), जैव विविधता सम्मेलन का अधिशासी निकाय (Governing Body) है। यह समय-समय पर बैठकों के माध्यम से कन्वेंशन का कार्यान्वयन करता है। जैव विविधता सम्मेलन (सीबीडी) के तीन स्तंभों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को पार्टियां बैठकों के माध्यम से पुष्टि करते हैं। सीबीडी का सीओपी सम्मेलन जैव विविधता पर सबसे महत्वपूर्ण द्विवार्षिक आयोजन है। वर्ष 1992 से सीओपी की अब तक 10 बैठकें आयोजित हो चुकी हैं तथा 11वीं बैठक का आयोजन 1 से 19 अक्टूबर, 2012 के दौरान हैदराबाद में सम्पन्न हुआ।

- सीओपी-11 के तीन घटक हैं। इस सम्मेलन के दौरान 1 से 5 अक्टूबर, 2012 के बीच जैव सुरक्षा पर जैव विविधता सम्मेलन (Convention on biological diversity - CBD) के कार्टाजेना प्रोटोकॉल के दलों की बैठक के तौर पर उनका छठा सम्मेलन सम्पन्न हुआ। 8 से 19 अक्टूबर, 2012 के दौरान जैव विविधता सम्मेलन के लिए सीओपी-11 का आयोजन किया गया और सीओपी-11 के उच्च स्तरीय सत्र का आयोजन 16 से 19 अक्टूबर, 2012 के दौरान किया गया।

- जैव विविधता सम्मेलन (सीबीडी) के तत्वाधान में अब तक दो प्रोटोकॉल स्वीकार किए जा चुके हैं। जैव सुरक्षा पर कार्टाजेना प्रोटोकॉल (सीपीबी) को वर्ष 2000 में स्वीकार किया गया और वर्ष 2010 में पहुँच और लाभ के लिए भागीदारी पर नागोया प्रोटोकॉल को स्वीकार किया गया।

जैव सुरक्षा समझौता: कार्टाजेना प्रोटोकॉल

यह जैव सुरक्षा समझौता है। इस समझौता को वर्ष 2000 में पेरिस में जैव विविधता सभा ने अंगीकृत किया। इस समझौते को 86 से ज्यादा देश स्वीकार कर चुके हैं। यह समझौता जैनेटिक तरीके से सुधारे गये उत्पादों को नियमित करने के उद्देश्य से किया गया। आज के वैश्वीकरण के युग में औद्योगिक कंपनियां जैनेटिक रूप से सुधारे गये उत्पादों का निर्यात अन्य देशों में करना चाहती हैं जहाँ ये उत्पाद जैव सुरक्षा के लिए समस्या बन सकते हैं। जैसे टर्मिनेटेड सीड। इस सीड से उगाये गये अनाज आस-पास के अन्य फसलों पर कुप्रभाव डालते हैं।

इस समझौते के महत्वपूर्ण पहलू निम्न हैं-

- सदस्य राष्ट्र यदि यह महसूस करते हैं कि कोई जैनेटिक बीज या पशु आदि उनके पर्यावरण अथवा उत्पाद को हानि पहुँचा सकते हैं तो उसे वे प्रतिबंधित कर सकते हैं।
- जैनेटिक रूप से सुधार किये गये उत्पादों के पैकेट में उत्पाद के बारे में विवरण लिखना आवश्यक होगा।

नागोया प्रोटोकॉल: 2010

24 अक्टूबर, 2010 को नागोया जापान में संयुक्त राष्ट्र देशों ने जेनेरिक संसाधनों की भागीदारी पर समझौता किया। जंगलों, कोरल रीफ और जैव विविधता की रक्षा के लिए नागोया में वर्ष

2010 में यह ऐतिहासिक संधि हुआ था। 193 देशों के प्रतिनिधियों ने प्रदूषण को रोकने, वनों को समुद्री जीवन की रक्षा करने तथा संरक्षण के लिए जमीन एवं जल संसाधन अलग करने तथा मत्स्यन का सही प्रबन्धन करने का फैसला किया।

- संधि के अनुसार जैविक विविधता को बचाने के लिए 17 प्रतिशत भू-क्षेत्र और 10 प्रतिशत समुद्र की सुरक्षा करनी है ताकि जैव विविधता का विस्तार हो सके।
- भारत ने भी नागोया संधि को स्वीकार किया है।
- यह संधि आनुवांशिक संसाधनों तक पहुँच और उनके प्रयोग से होने वाले फायदों की निष्पक्ष और समान भागीदारी की बात करती है।

जैव विविधता सम्मेलन: 2012

हैदराबाद में आयोजित संयुक्त राष्ट्र का जैव विविधता सम्मेलन (Convention on Biological Diversity- CBD) कोप-11, 20 अक्टूबर 2012 को विकसित एवं विकासशील देशों के बीच गतिरोध के साथ समाप्त हो गया। गतिरोध इस बात पर था कि जैव विविधता के संरक्षण के लिए विकसित और विकासशील देशों की ओर से कितनी आर्थिक मदद दी जा सकती है। इस सम्मेलन में जैव विविधता के भविष्य के लिए 30 प्रस्तावों पर विचार हुआ। इसमें से 28 पर सभी पक्षों ने मुहर लगा दी। जिन दो पर सहमति नहीं बन पायी, वे दोनों मुद्दे जैव विविधता को आर्थिक सहायता देने से संबंधित थे। उन्नीस दिनों तक चली इस सम्मेलन में विकासशील देशों के ग्रुप-77 की माँग थी कि विकसित देश आर्थिक योगदान बढ़ाएँ। लेकिन विकसित देश और विशेषकर यूरोपियन यूनियन के सदस्य उसे मानने के लिए तैयार नहीं हुए। अब तक केवल भारत एवं जर्मनी ने ही स्पष्ट घोषणा की है कि वे कितना पैसा खर्च करने के लिए तैयार हैं। भारत ने कहा कि वे देश के अंदर जैव-विविधता संरक्षण पर और इस काम के लिए विकासशील देशों के हित के लिए पाँच करोड़ डॉलर खर्च करेगा जबकि जर्मनी ने कहा है कि वह वर्ष 2013-14 के दौरान विश्व भर में जंगलों के संरक्षण के लिए 50 करोड़ डॉलर देगा। भारत ने सुझाव रखा है कि वर्ष 2015 तक के लिए विकसित देश जैव विविधता के संरक्षण की सहायता के लिए अपनी सहायता दोगुनी कर दे। भारत इस 'काफ़ेस ऑफ पार्टीज' का अध्यक्ष बन गया है और दो वर्षों तक यह पद संभालेगा।

जैव विविधता संधि

पृथ्वी शिखर सम्मेलन में भारत सहित 171 देशों में जैव विविधता संधि पर हस्ताक्षर किये। यह संधि 1993 से प्रभावी हो गयी। इसके महत्वपूर्ण पहलू निम्न हैं-

- पेड़, पौधे और जीवों पर संबंधित देशों का अधिकार होगा, जहाँ पे पाये जाते हैं। यदि उन्हें अन्य देश में ले जाकर उनसे नया उत्पाद विकसित किया जाता है तो उनके पितृ देश को क्षतिपूर्ति दी जानी चाहिये।
- जैव प्रौद्योगिकियों को न्यायपूर्ण और अनुकूल शर्तों पर उन विकसित देशों से जो आनुवंशिक संसाधनों के उत्पादक हैं, विकासशील देशों को स्थानान्तरित करना।
- पारम्परिक ज्ञान, कौशल, नवाचारों और व्यवहारों के उपयोग से होने वाले लाभों में बराबरी की हिस्सेदारी की सहमति।

विश्व धरोहर सम्मेलन

वर्ल्ड कल्चरल एंड नेचुरल हेरिटेज (वर्ल्ड हेरिटेज कन्वेंशन) की सुरक्षा के संबंध में कन्वेंशन, सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासत की सुरक्षा के लिए एक फल वैश्विक साधन है।

पृष्ठभूमि

वर्ल्ड हेरिटेज कन्वेंशन को 16 नवंबर 1972 को पेरिस में अपने 17 वें सत्र में संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) द्वारा सामान्य सम्मेलन में अपनाया गया था। यह कन्वेंशन 1975 में लागू हुआ। अगस्त 1974 में आस्ट्रेलिया पहला बन गया। कन्वेंशन की पुष्टि करने के लिए देश।

लक्ष्य

वर्ल्ड हेरिटेज कन्वेंशन का उद्देश्य दुनिया भर में विरासत की रक्षा के लिए राष्ट्रों के बीच सहयोग को बढ़ावा देना है जो इस तरह के उत्कृष्ट सार्वभौमिक मूल्य है कि इसका संरक्षण वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए महत्वपूर्ण है।

- मैं एक सामान्य नीति को अपनाता हूँ जिसका उद्देश्य सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासत को समुदाय के जीवन में एक समारोह देना और उस विरासत की सुरक्षा को व्यापक योजना कार्यक्रमों में एकीकृत करना है।
- 'इस धरोहर की पहचान, संरक्षण, संरक्षण, प्रस्तुतीकरण और पुनर्वास के लिए आवश्यक कानूनी, वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक और वित्तीय उपाय'

- किसी भी जानबूझकर किए गए उपायों से बचना चाहिए, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासत को अन्य पार्टियों के कन्वेंशन को नुकसान पहुंचा सकते हैं, और अन्य पार्टियों को उनकी संपत्तियों की पहचान और संरक्षण में मदद करने के लिए।

विश्व धरोहर सम्मेलन का प्रशासन

वर्ल्ड हेरिटेज कन्वेंशन को एक वर्ल्ड हेरिटेज कमेटी द्वारा प्रशासित किया जाता है, जो सालाना बैठक करती है और इसमें उन राज्यों से चुने गए 21 सदस्य शामिल होते हैं जो कन्वेंशन के पक्षकार होते हैं—

- विश्व विरासत सूची में नम्र संपत्तियों के शिलालेख पर निर्णय।
- कन्वेंशन के कार्यान्वयन से संबंधित सभी मामलों पर चर्चा करें।
- अंतर्राष्ट्रीय सहायता के लिए अनुरोध पर विचार करें।
- राज्य दलों को सलाह दें कि वे विश्व विरासत संपत्तियों की रक्षा के लिए राज्यों को कन्वेंशन के तहत अपने दायित्वों को कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं।

विश्व विरासत संधि

यह संधि वैश्विक महत्व के पर्यावरणीय स्थल को संरक्षित करने के उद्देश्य से कार्यान्वित की गई थी। भारत ने इस संधि पर 18 अक्टूबर, 1976 को हस्ताक्षर किया तथा 1977 में इसे अपना अनुमोदन प्रदान किया। इस संधि के अनुसार भारत के पांच प्राकृतिक स्थल को विशिष्ट वैश्विक महत्व के स्थल के रूप में चिन्हित किया गया है। ये स्थल हैं—

| भारत में प्राकृतिक विश्व विरासत स्थल | | |
|--|---|---------|
| क्र. साइट राज्य के नाम | स्थान का नाम | अधिसूचन |
| 1. महान हिमालयी राष्ट्रीय उद्यान संरक्षण क्षेत्र | हिमाचल प्रदेश | 2014 |
| 2. पश्चिमी घाट | महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल | 2012 |
| 3. नंदा देवी और फूलों की घाटी राष्ट्रीय उद्यान | उत्तराखंड | 1988 |
| 4. सुंदरबन नेशनल पार्क | पश्चिम बंगाल | 1987 |

| | | |
|------------------------------|----------|------|
| 5. काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान | असम | 1985 |
| 6. केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान | राजस्थान | 1985 |
| 7. मानस वन्यजीव अभ्यारण्य | असम | 1985 |

प्रोटोकाल

परिभाषा - प्रोटोकॉल का क्या अर्थ है?

एक प्रोटोकॉल डेटा संचार के लिए नियमों और दिशानिर्देशों का एक समूह है। दो या दो से अधिक कंप्यूटरों के बीच संचार के दौरान प्रत्येक चरण और प्रक्रिया के लिए नियमों को परिभाषित किया गया है। नेटवर्क को सफलतापूर्वक डेटा प्रसारित करने के लिए इन नियमों का पालन करना होगा।

Techopedia प्रोटोकॉल को समझाता है

प्रोग्रामिंग भाषाओं के समान, प्रोटोकॉल कंप्यूटिंग के लिए विशिष्ट नियमों और विनियमों पर आधारित हैं और दक्षता के लिए डिजाइन किए गए हैं। प्रत्येक नियम को अलग-अलग शब्दों में परिभाषित किया गया है और एक अद्वितीय नाम दिया गया है। प्रोटोकॉल संचार के मानकों को निर्दिष्ट करते हैं और डेटा ट्रांसमिशन में शामिल प्रक्रियाओं पर विस्तृत जानकारी प्रदान करते हैं। ऐसी प्रक्रियाओं में शामिल हैं:

कार्य का प्रकार

- प्रक्रिया प्रकृति
- डेटा प्रवाह दर
- डाटा प्रकार
- डिवाइस प्रबंधन

एक ही प्रक्रिया को एक साथ एक से अधिक प्रोटोकॉल द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। प्रोटोकॉल का यह समन्वय एक प्रोटोकॉल परिवार बनाता है।

रामसर (आर्द्र भूमि) संधि

यह विश्व में आर्द्र भूमि के संरक्षण हेतु की गई संधि है। भारत 1 फरवरी, 1982 को इस संधि वाले देशों की सूची में शामिल हुआ। इस अन्तर्राष्ट्रीय संधि के तहत भारत के छह आर्द्र भूमियों को महत्वपूर्ण वेटलैंड के रूप में चुना गया है। ये वेटलैंड (आर्द्रभूमि) हैं—

रामसर साइटों की सूची

| क्र. | नाम | स्थान | |
|------|---|-----------------|----------------|
| 1 | अष्टमुडी वेटलैंड | केरल | 19 अगस्त 2002 |
| 2 | भितरकनिका मैंग्रोव ओडिशा | | 19 अगस्त 2002 |
| 3 | भोज वेटलैंड | मध्य प्रदेश | 19 अगस्त 2002 |
| 4 | चंद्र ताल | हिमाचल प्रदेश | 8 नवंबर 2005 |
| 5 | चिलिका झील | ओडिशा | 1 अक्टूबर 1981 |
| 6 | दीपोर बील | असम | 19 अगस्त 2002 |
| 7 | पूर्वी कोलकाता वेटलैंड्स | पश्चिम बंगाल | 19 अगस्त 2002 |
| 8 | हरिके वेटलैंड | पंजाब | 23 मार्च 1990 |
| 9 | होकेरा वेटलैंड | जम्मू और कश्मीर | |
| 10 | कांजली वेटलैंड | पंजाब | 22 जनवरी 2002 |
| 11 | केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान | राजस्थान | 1 अक्टूबर 1981 |
| 12 | कोल्लेरू झील | आंध्र प्रदेश | 19 अगस्त 2002 |
| 13 | लोकतक झील | मणिपुर | 23 मार्च 1990 |
| 14 | नलसरोवर पक्षी अभ्यारण्य | गुजरात | 24 सितंबर 2012 |
| 15 | प्वाइंट कैलिमेरे वन्यजीव और पक्षी अभ्यारण्य | तमिलनाडु | 19 अगस्त 2002 |
| 16 | पौंग बांध झील | हिमाचल प्रदेश | 19 अगस्त 2002 |
| 17 | रेणुका झील | हिमाचल प्रदेश | 8 नवंबर 2005 |
| 18 | रोपड़ वेटलैंड | पंजाब | 22 जनवरी 2002 |
| 19 | रुद्रसागर झील | त्रिपुरा | 8 नवंबर 2005 |
| 20 | सांभर झील | राजस्थान | 23 मार्च 1990 |
| 21 | सस्तमकोटा झील | केरल | 19 अगस्त 2002 |
| 22 | सुरिनसर-मानसर झील | जम्मू और कश्मीर | 8 नवंबर 2005 |
| 23 | सोमोरीरी | जम्मू और कश्मीर | |
| 24 | ऊपरी गंगा नदी (ब्रजघाट से नरौरा खिंचाव) | उत्तर प्रदेश | 8 नवंबर 2005 |
| 25 | वेम्बनाड-कोल वेटलैंड | केरल | 19 अगस्त 2002 |
| 26 | वुलर झील | जम्मू और कश्मीर | 23 मार्च 1990 |

इनमें चिल्का झील तथा केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान दो ऐसे आर्द्र भूमि क्षेत्र हैं, जिन्हें रामसर अन्तर्राष्ट्रीय संधि के तहत मान्यता प्राप्त है।

मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल

पदार्थों पर 1987 मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल जो ओजोन लेयर को डिप्लिट करता है, एक ऐतिहासिक समझौता है जिसने ओजोन-घटने वाले पदार्थों (ओडीएस) के वैश्विक उत्पादन, खपत और उत्सर्जन को सफलतापूर्वक कम कर दिया है। ओडीएस भी ग्रीनहाउस गैसों हैं जो जलवायु परिवर्तन के विकिरण संबंधी बल में योगदान करती हैं।

पदार्थों पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल जो ओजोन परत को चित्रित करता है। पदार्थों पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल जो ओजोन लेयर को अवनत करता है, स्ट्रेटोस्फेरिक ओजोन परत की रक्षा के लिए बनाया गया एक ऐतिहासिक अंतर्राष्ट्रीय समझौता है। संधि को मूल रूप से 1987 में हस्ताक्षरित किया गया था और 1990 और 1992 में कभी हद तक संशोधित किया गया था।

पदार्थों पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल जो ओजोन परत को परिभाषित करता है (ओजोन परत के संरक्षण के लिए विन्यास सम्मेलन के लिए एक प्रोटोकॉल) ओजोन रिक्तीकरण के लिए जिम्मेदार कई पदार्थों के उत्पादन को चरणबद्ध करके ओजोन परत की रक्षा के लिए बनाया गया एक अंतर्राष्ट्रीय संधि है।

मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल ओजोन हटाने वाले पदार्थों से ओजोन परत के संरक्षण पर और 1 जनवरी 2010 तक इसके उत्पादन और खपत को चरणबद्ध तरीके से समाप्त करने के लिए अंतरराष्ट्रीय संधि है। यह संधि 1987 में लागू हुई जो 197 देशों द्वारा पुष्टि की गई थी, 19 जून 1992 को भारत इसका हस्ताक्षरकर्ता सदस्य बना।

नियम और उद्देश्य

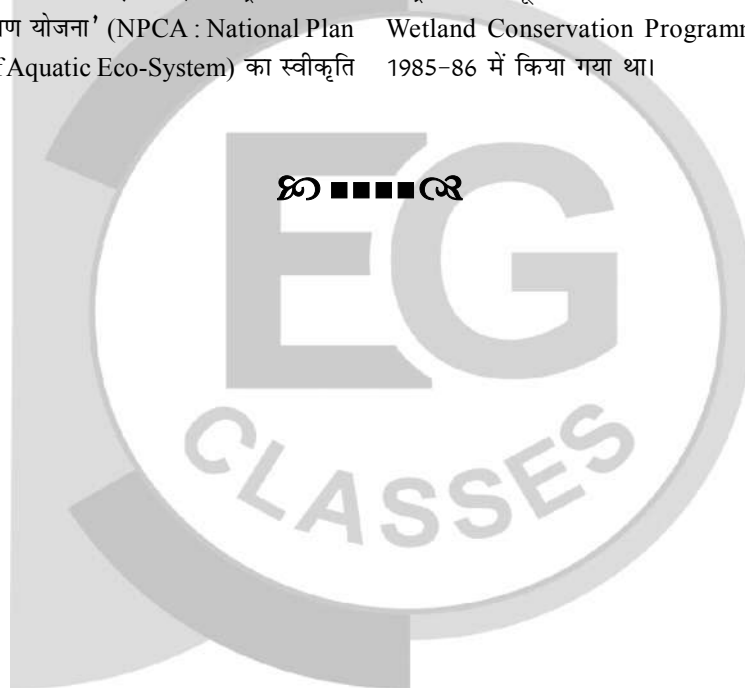
संधि हैलोजेनड हाइड्रोकार्बन के कई समूहों के आसपास संरचित है जो स्ट्रेटोस्फेरिक ओजोन को समाप्त करता है। मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल द्वारा नियंत्रित सभी ओजोन क्षयकारी पदार्थों में क्लोरीन या ब्रोमीन (केवल फ्लोरीन युक्त पदार्थ ओजोन परत को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं) होते हैं। कुछ ओजोन-क्षयकारी पदार्थ (ODS) मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल द्वारा अभी तक नियंत्रित नहीं किए जाते हैं, जिसमें नाइट्रस ऑक्साइड (N₂O) शामिल हैं।

ओडीएस के प्रत्येक समूह के लिए, संधि एक समय सारिणी प्रदान करती है, जिस पर उन पदार्थों के उत्पादन को गोली मार दी जानी चाहिए और अंततः समाप्त हो जाना चाहिए। इसमें संधि के अनुच्छेद 5 में पहचाने गए विकासशील देशों (14) के लिए 10 साल का चरण शामिल था।

राष्ट्रीय जलीय पारिस्थितिकी तंत्र संरक्षण योजना

फरवरी, 2013 में भारत सरकार ने 'राष्ट्रीय झील संरक्षण योजना' एवं राष्ट्रीय नम भूमि संरक्षण कार्यक्रम' के कार्यक्रमों एवं स्थलों में हो रहे परस्पर अतिक्रमण तथा दोहरे व्यय से बचाने हेतु इन्हें समन्वित कर एक नई 'राष्ट्रीय जलीय पारिस्थितिक-तंत्र संरक्षण योजना' (NPCA : National Plan for Conservation of Aquatic Eco-System) का स्वीकृति

प्रदान कर दी। इस योजना पर 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 900 करोड़ रुपये की अनुमानित राशि का व्यय होगा। इस योजना में केन्द्र एवं राज्यों (पूर्वोत्तर राज्यों के अतिरिक्त) के मध्य लागत भागीदारी का अनुपात 70 : 30 का होगा जबकि पूर्वोत्तर राज्यों के संदर्भ में यह अनुपात 90 : 10 का होगा। ज्ञातव्य है कि राष्ट्रीय झील संरक्षण योजना (NLCP) का प्रारंभ जून, 2001 में शत-प्रतिशत केन्द्रीय सहायता के साथ किया गया था। फरवरी, 2002 में इस योजना में केन्द्रीय सहायता 70 प्रतिशत के स्तर पर कर दी गई जिससे केन्द्र एवं राज्यों की भागीदारी का अनुपात 70 : 30 का हो गया। विदित हो कि राष्ट्रीय नम भूमि संरक्षण कार्यक्रम (NWCP: National Wetland Conservation Programme) का प्रारंभ वर्ष 1985-86 में किया गया था।



जैव उपचारण (BIOREMEDIATION)



जैव उपचारण 'जीव-जन्तुओं (प्राथमिकतः सूक्ष्म जन्तु) के उपयोग से पर्यावरणीय प्रदूषकों को निम्नीकृत करना या अपशिष्ट उपचार द्वारा प्रदूषण रोकना है।' जैव उपचारण पर्यावरण से प्रदूषकों को हटाकर संदूषित स्थानों के प्रत्यानयन एवं संभावित प्रदूषण को रोकने के लिए एक सबसे आदर्श वैकल्पिक प्रौद्योगिकी के रूप में विकसित हो रहा है।

जैव उपचारण का कार्य क्षेत्र तथा आवश्यकता

जैव उपचारण का प्रयोग पूरे विश्व में पर्यावरणीय प्रदूषकों को निम्नीकृत करने के लिए या अपशिष्ट नालों के प्रदूषण नियंत्रण के लिए हो रहा है। जैव उपचारण की आवश्यकता है क्योंकि कुछ रसायन पर्यावरण में इस स्तर तक संचित हो जाते हैं कि जन स्वास्थ्य या पर्यावरणीय गुणता के लिए खतरनाक होते हैं। OECD 1991 में संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, जापान और पश्चिम यूरोपीय देशों में जैव प्रौद्योगिकी के पर्यावरणीय अनुप्रयोगों पर विचार करने के लिए वैज्ञानिकों और सरकारी प्रतिनिधियों की सभाएं प्रायोजित कर रही हैं। इस प्रकार की सभाओं में, अन्य क्षेत्रों के अतिरिक्त, प्रतिनिधियों ने जैव उपचारण की कला की अवस्था और सरकार किस प्रकार इसको अनुसंधान और विकास में सहायता के लिए विस्तृत कर सकती है, को जांचा।

जैव उपचारण के पर्यावरणीय अनुप्रयोग

जैव उपचारण के लिए उपयोगी सूक्ष्म जन्तुओं की श्रेणी विस्तृत करने हेतु अनुसंधान परियोजनाएं रूपांतरित की गई हैं। हमें

तलाश है, प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले सूक्ष्म जीवों की जिनमें अच्छी प्रदूषक निम्नीकरण क्षमता हो, और जो प्रदूषण संयुक्तों की व्यापक श्रेणी पर आक्रमण कर सकें और वे सूक्ष्मजैविक वृद्धि अवस्थाओं की व्यापक श्रेणी पर वृद्धि कर सकें। उन सूक्ष्मजीवियों के लिए भी तलाश है जो चरम पर्यावरणीय अवस्थाओं के अंतर्गत वृद्धि कर सकें। जैसे कार्बनिक विलायकों को सहन करने योग्य हों तथा अत्यन्त क्षारीय (आधार) या उच्च तापमान के अंतर्गत वृद्धि कर सकें। अनुसंधायक आनुवांशिक अभियांत्रिकी का उपयोग नए सूक्ष्मजीवों को उत्पन्न करने में कर रहे हैं। ऐसे सूक्ष्मजीव जो जैव निम्नीकरण योग्यताओं से परिपूर्ण हों उदाहरण के लिए, रूपांतरित सूक्ष्मजीव आनुवांशिक कुछ से उत्पन्न किए जा सकते हैं जो समिश्र क्लोरीनीत हाइड्रोकार्बन जैसे डाई ओक्सिन पर क्रिया कर सकें, जो प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले सूक्ष्म जन्तुओं द्वारा अनिम्नीकरणीय है। जीन को छोड़कर नए एन्जाइम बना सकते हैं जो विषैले रसायनों को भंग करें जिससे सूक्ष्मजीव अति बाधक और नीरस पर्यावरण में जीवित रहे सकें। यह यौगिक वस्तुओं की श्रेणियों को बढ़ाएगा जो जैव उपचारण में व्यवहारित किए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए जापान में एक अनुसंधान समूह ने पहले ही स्यूडोमोनास की एक जाति उत्पन्न की है जो विलायकों में जिसमें 50 प्रतिशत से अधिक टॉलूईन होता है वृद्धि कर सकती है। यह एक ऐसी अवस्था है जो अधिकतर जन्तुओं को कोशिका झिल्ली के विदारण द्वारा मार देती है। इस विभेद में अपचय एन्जाइम के लिए उचित जीन मिलाने से निर्जल विलायकों में जीव रूपांतरण की श्रेणी बढ़ाने के लिए अत्यधिक क्षमता हो जाएगी। यूरोपीय अपने परम्परागत अपशिष्टों

और जल उपचार तंत्रों को विशिष्ट रासायनिक प्रदूषण से निपटने के लिए विस्तृत कर रहे हैं, संयुक्त राज्य अमेरिका पेट्रोलियम और जीनोबायोटेक्स से संदूषित मृदा और जल के विशिष्ट स्थान परीक्षण पर ध्यान दे रहा है, और जापानियों ने भूमण्डलीय पर्यावरणीय समस्याओं का लक्ष्य निर्धारित किया है।

परम्परागत अपशिष्ट और जल उपचार तंत्रों की यूरोपीय प्रगति

कई यूरोपीय देशों, विशेषकर जर्मनी, नीदरलैण्ड, बेल्जियम, ऑस्ट्रिया और इटली में पर्यावरणीय जैव प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने के लिए R&D कार्यक्रम शुरू किए गये हैं। जर्मन सरकारी एजेंसियां सरकार-प्रायोजक अनुसंधान संस्थाओं और प्राइवेट उद्योग के बीच प्रौद्योगिक स्थानांतरण और सहकारी अनुसंधान को बढ़ावा देती हैं। नीदरलैण्ड, जो पर्यावरणीय जैव प्रौद्योगिकी में सबसे अधिक विकसित देश हैं, सरकार जैव उपचारण में नई पद्धति के खोज के R&D कार्यक्रम को सहायता देती है और कार्यक्रम में भाग लेने वाले उद्योगों को सहायता देती है। उदाहरण के लिए, 1978 में, डच कण्टक और वायु प्रदूषण एक्ट ने पारम्परिक च्याव फिल्टर का रूपांतरण कर जैव फिल्टर के विकास का लाभ उठाया और इन जैव फिल्टरों को लगाने की आज्ञा दी, ताकि वायु गुणता स्तर पूरा हो सके।

जैव गैस उपचार प्रणाली

पारम्परिक जल उपचार तंत्र, विशिष्टतः वायवीय च्यायी फिल्टर वायु प्रदूषकों के उपचार हेतु रूपांतरित किए गए हैं। जैव स्क्रबर और जैव ट्रिकलिंग फिल्टर में, बहुत से सूक्ष्मजीवी समुदाय ठोस सतह पर वृद्धि करते हैं तथा बहुस्तरीय सम्मिश्र बनाते हैं जिसे जैव पर्त कहते हैं। जब कार्बनिक प्रदूषक युक्त गैस धारा इस तंत्र से निकलती है तो प्रदूषक निम्नीकृत हो जाते हैं। नीदरलैण्ड्स और जर्मनी में कई कंपनियों ने इस प्रकार की गैस उपचार प्रणाली विकसित करने में नेतृत्व किया। 1978 से जब कंटक और वायु प्रदूषण एक्ट नीदरलैण्ड में लागू किया गया तो 200 से अधिक जैव फिल्टर संस्थापित किए गए और वह प्रौद्योगिकी अब उस देश में विस्तृत रूप से उपयोग में ली जा रही है। वायु उपचार जीव रिएक्टर नीदरलैण्ड्स में प्लाईवुड उत्पादन सुगमताओं

से उत्सर्जित वायु से फॉर्मेलिडहाइड और रेजिन उत्पादकों से फिनॉल हटाने के लिए उपयोग में लाए जा रहे हैं। कुछ कवक जैव फिल्टर्स की वायु में वाष्पशील कार्बनिक संयुक्तों के उपचार के लिए समायोजित की जाती है। कुछ कवक जैसे केन्डिडा ट्रोपिकेलिस स्टाइरीन का उपचयन करने में सक्षम होती है।

औद्योगिक व्यर्थजल से विषैले रसायनों का निष्कासन

नया अपशिष्ट उपचार तंत्र भी वांछनीय विशिष्ट सूक्ष्मजन्तुओं की जनसंख्या व्यवस्थित कर सकता है जो औद्योगिक संयंत्र के व्यर्थ जल में पाये जाने वाले विषैले यौगिक जैसे हाइड्रोकार्बन और क्लोरीनयुक्त विलायक का जैव निम्नीकरण करते हैं। जीवाणु जैसे स्यूडो मोनास सोपेसिया डी.टी., हेपेटाक्लोर, क्लोरडेन इत्यादि बनाने वाले कीटनाशक उद्योगों के बहिःस्त्राव में उपस्थित क्लोरीनयुक्त हाइड्रोकार्बन का जैव निम्नीकरण करने में सक्षम होते हैं। इटली के मेटिरा में जैव रिएक्टर में उस फैक्ट्री के व्यर्थ जल को अवायवीय तौर पर व्यवहारित किया जाता है जो एपीक्लोरो हाइड्रिस और फिनोलिक्स से एपॉक्सी रेजिन उत्पादित करता है। हांगकांग में वस्त्र और रंजक उद्योग एसीटोबेक्टर लिक्विफेसिएन्स S-1 जीवाणु का उपयोग व्यर्थ जल उपचार के लिए करते हैं। यह जीवाणु संवर्धन में चटक एजो डाई (अगार प्लेट जिसमें 100 PPM मिथाइल रेड है) का उपयोग करने में सक्षम होता है।

ठोस अपशिष्टों और कचरे से जैव गैस

कुछ नए विकसित यूरोपीय अपशिष्ट उपचार तंत्रों द्वारा यह पहचान की जा सकी कि कुछ सूक्ष्म जैविक निम्नीकरण या रूपांतरण ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में ही होता है और इस प्रकार का प्रक्रम पर्यावरणीय जैव प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण हो सकता है। अवायवीय अवस्थाओं के अंतर्गत, अपशिष्टों पर वृद्धि होने वाले सूक्ष्म जन्तु कभी-कभी कीमती ईंधन उत्पन्न करते हैं। शुष्क अवायवीय कम्पोस्ट (ड्रेको) प्रक्रम जैव निम्नीकरणीय कार्बनिक ठोस अपशिष्ट और कचरे के कार्बनिक पदार्थ को ऊर्जा में जैव गैस (मीथेन और कार्बनडाई-ऑक्साइड) के रूप में ह्यूमस के समान पदार्थ में बदलते हैं। जैव गैस

अवायवीय जीवाणु मिथेनोजेन्स (मीथेन उत्पन्न करने वाले जीवाणु) द्वारा पैदा की जाती है। ड्रेन्को प्रक्रम का उपयोग ब्रेक्ट बेल्लिजयम और साल्जबर्ग, ऑस्ट्रिया में अमल में लाया जा रहा है। इस तंत्र में स्रोत पर ही विलग पादम अवशिष्ट और नगरपालिका अवशिष्ट कागज इत्यादि उपयोग में लाए जाते हैं। साल्जबर्ग, ऑस्ट्रिया में दोनों अवायवीय और वायवीय सूक्ष्मजीवियों का उपयोग होता है।

अकार्बनिक संयुक्त का निष्कासन

कुछ अपशिष्ट जल तंत्र, मौलिक तौर पर जल से कार्बनिक संयुक्तों को हटाने हेतु बनाये गये हैं। जिसमें वायवीय आधार पर BOD निम्न किया जा सके तथा जिसमें अकार्बनिक संयुक्तों को हटाने के लिये अवायवीय क्षेत्र को भी शामिल कर रूपान्तरण किया गया है। इस प्रकार का एक तंत्र, जो पपड़ी उतारने वाला तरल तत्त्व रियेक्टर है जो जल से नाइट्रेट को निकालता है, ब्लैंकार्ट, बेल्लिजयम में नगरपालिका जल उपचार सुविधा पर परखा गया है। व्यर्थ जल से नाइट्रेट का निष्कासन जलमार्गों का सुपोषण रोकने में सहायक होता है। रियेक्टर में मीथाइलोड्रोफिक जीवाणु, जैसे- मीथाइलोफिलस मीथाइलोड्रोपस होता है, जो बिनाइट्रीकरण करता है। मिथैलोड्रोप्स की वृद्धि को बढ़ावा देने के लिये मिथैनाल पहले जीवरियेक्टर में डाला जाता है तथा बाद में च्याबी फिल्टर और कणिकामय क्रियाशील कार्बन फिल्टर द्वारा निष्कासित किया जाता है। यह जल उपयोग से पहले किया जाता है। जीवाणु नाइट्रेट को नाइट्राइट में और फिर आण्विक नाइट्रोजन में बदलते हैं जो वातावरण में उत्सर्जित होती है।

जैव उपचारण प्रौद्योगिकी का जापानी

भू-मण्डलीय अनुप्रयोग

जापान में शिक्षण संस्थान, औद्योगिक और सरकारी अनुसंधान अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और उद्योग मंत्रिमण्डल द्वारा समन्वित होते हैं। जापानी जैविक उपचारक अनुसंधान 21वीं सदी में पर्यावरणीय निम्नीकरण को ठीक करने के तरीकों पर ध्यान दे रहा है। MITI का अनुसंधान एजेंडा बजाय स्थान विशेष परिशोधन के भूमण्डलीय समस्याओं पर ज्यादा जोर देता है जैसे जलवायु परिवर्तन और मरुस्थलीकरण।

जैव विगंधकन

जापानियों ने औद्योगिक वायु उत्सर्जन से अकार्बनिक सल्फर हटाने के लिए सूक्ष्म जैविक तंत्रों को भी विकसित किया है। डोवा-खनन द्वारा विकसित बायो-SR तंत्र व्यावसायिक उपयोग के लिए लगाया गया। उद्योग से निकलने वाली हाइड्रोजन सल्फाइड युक्त गैस अम्लीय फेरिक सल्फेट विलयन से होकर निकलती है जो सल्फाइड को तात्विक सल्फर में उपचरित करती है तथा फेरिक आयन को फेरस आयन में अपचयित करती है।

संयुक्त राज्य में भी वुडलैण्ड में ऊर्जा तंत्र टैक्सास, इसी प्रकार का तंत्र कार्बनिक सल्फर निष्कासित करने के लिए विकसित कर रहा है जो जीवाश्म ईंधन में उपस्थित होता है। 1990 से जीव रसायन उद्योग के विकास के लिए जापानी सरकार की नीति है कि उद्योग तंत्र भूमण्डलीय पर्यावरण की परिरक्षा, अपशिष्ट उपचार और प्राकृतिक संप्रदाओं के संरक्षण के लिए कार्य करें।

मरुस्थल निर्माण का उत्क्रमण

अभी 4.5 मिलियन वर्ग किमी. (ग्रह के कुल भूमि क्षेत्रफल का 35 प्रतिशत) विभिन्न मृदाओं से जल के हनन के कारण मरुस्थलीकरण द्वारा ग्रसित है। मरुस्थल निर्माण को उत्क्रम कर सके इसके लिए सूक्ष्मजीव उत्पन्न करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। इस प्रकार के जैविक तंत्र जैवबहुलक जैसे उत्पाद उत्पन्न करते हैं जो जल प्रतिधारित करके बड़े भूदृश्य पर मरुस्थलीकरण को रोक जापान में, MITI पोषित कार्यक्रम में जीवाणु एल्केलीजीन्स लेटस का उपयोग शुरू किया, जो अतिरिक्त जैव अवशोषक उत्पन्न कर सके।

भू-मण्डलीय ऊष्णता का उत्क्रमण

जापान के वैज्ञानिक भूमण्डलीय ऊष्णता को कम करने के लिये प्रौद्योगिकी विकसित करने में प्रयासरत है। हाइड्रोजन और दूसरे ईंधनों जो भूमण्डलीय जलवायु में परिवर्तन न करें, के अलावा वे ऐसे जैव उपाचरण तंत्र को विकसित करने में लगे हैं जो कार्बनयुक्त जीवाश्म ईंधनों के जलने से उत्पन्न कार्बन डाइऑक्साइड को पर्यावरण से दूर करके प्रदूषण कम कर सके।

इस अतिरिक्त कार्बन-डाइऑक्साइड का निष्कासन जो जीवाश्म ईंधन को जलने के कारण वातावरण को प्रदूषित कर रहा, वह जैव उपचारण का अत्यंत चमत्कारिक प्रमाण होगा। इसके अलावा ग्रीन हाउस गैस के स्वांगीकरण द्वारा उत्पादित कार्बनिक यौगिक सम्भवतः कार्बन डाइऑक्साइड और जल में जैवनिम्नीकृत होते हैं फिर से यह गैस वापस वायु में उत्सर्जित हो जाती है। इस प्रकार के शैवाल और अन्य सूक्ष्म जीवों को उपयोग करके सफलतम जैविक उपचारक कार्यक्रम हो सकता है। इसके लिये निर्भर करेगा कि इस प्रकार के सूक्ष्मजीवों की खोज पर जो लिग्निन (Lignin) या अन्य बहुलक संयुक्त उत्पन्न करे जैवनिम्नीकरण के प्रतिरोधी हो जैसे कि मूल जीवाश्म ईंधन थे। इस प्रकार के रूपान्तरण, वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड के वर्धन को कम करके कार्बन को अचल करेंगे।

जैव निम्नीकरणीय प्लास्टिक

सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पादित पॉलिहाइड्रोक्सीब्यूटरेट से निर्मित जैवनिम्नीकरणीय प्लास्टिक पहले ही विकसित हो चुकी है और यूनाइटेड किंगडम में ICI द्वारा विक्रय की जाती है। यह ICI की जैवनिम्नीकृत प्लास्टिक पूरे विश्व में निरर्थक पदार्थों को रखने वाले थैलों के निर्माण में उपयोग किए जाते हैं तथा लैंडफिल्स में जैव निम्नीकृत हो जाते हैं। जापान में तथा अन्यत्र सूक्ष्म जन्तुओं पर अध्ययन किए जा रहे हैं जो इस प्रकार के जैवनिम्नीकरणीय बहुलक उत्पादित करते हैं जो ठोस अपशिष्ट बनाते हैं।

शैल रासायनिकों के लिए प्रतिस्थापन

हाइड्रोजन ईंधन

उन सूक्ष्मजीवों की खोज जारी है जो कुछ पदार्थ उत्पन्न करते हैं, जो शैल रासायनिकों के लिए प्रतिस्थापन की तरह कार्य कर सकते हैं। जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान यांत्रिक ईंधन की तरह उपयोग किये जा सकने वाले हाइड्रोजन के उत्पाद की खोज में लगी है जो भूमण्डलीय जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी न हो। जापानी अनुसंधानात्मक सूक्ष्म जीवों का उपयोग करके इस प्रकार के ईंधन और पदार्थ उत्पन्न करने में लगे हैं जो कार्बन डाई-ऑक्साइड उत्सर्जन न करे और इस प्रकार वायु प्रदूषण कम हो सके।

स्थान-विशिष्ट परिशोधन पर

अमेरिकी केन्द्र बिन्दु

संयुक्त राज्य अमेरिका में जैविक उपचारण ज्यादातर उन स्थानों के परिशोधन के उपयोग में आता है जो विषैले रसायन अधिप्लाव या रासायनिक अपशिष्टों के प्रबंध में प्रदूषित हैं। संघीय और राज्य सरकारों ने कई अत्यधिक संदूषित स्थानों का परिशोधन कानूनी तौर पर किया है जिससे मानव स्वास्थ्य को खतरा हो सकता है। विशेषकर जहां प्रदूषक धीरे-धीरे मृदा से जलभर, जो पीने के पानी के उपयोग में आते हैं, में स्रावित हो रहे हैं। संघ भूमि पर संदूषित स्थानों के परिशोधन हेतु कई कंपनियों ने भी जैविक उपचारक के द्वारा पर्यावरणीय गुणता को दुबारा स्थापित करने के लिए कारगर मूल्य का जायजा लिया है।

तेल अधिप्लावन में पेट्रोलियम उत्पाद सहित कार्बनिक प्रदूषक

भारत जीवाश्म ईंधन, संबंधित यौगिक साथ ही साथ क्लोरीनयुक्त यौगिक जल और भूमि दोनों स्थानों को प्रदूषित करते हैं।

जल में संदूषित स्थानों का जैव उपचारण

प्रदूषण प्रायः सम्मिश्र संयुक्तों का मिश्रण है। अपशिष्टकृत तेल या कच्चा तेल, उदाहरण के लिए इसमें भिन्न संरचनाओं के साथ, कई हजार हाइड्रोकार्बन होते हैं। परिष्कृत तेलों में कई सौ भिन्न घटक होते हैं, जो PCBs के कई सजाति होते हैं और कुछ प्रदूषण तेल कीटनाशक, अन्य कार्बनिक संयुक्तों और अकार्बनिक जैसे भारी धातु के अनिश्चित संयोग के होते हैं।

भूमि पर संदूषित स्थलों का जैव उपचारण

पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन भूमि से भी सफलतापूर्वक पर्यावरण विमंदन के उपयोग द्वारा हटाए जा सकते हैं। जैसा कि 20 वर्षों से अधिक पहले एम्बर फिलाडेलफिया में गैसोलिन संदूषित जलभर के परिशोधन पर परीक्षणों में निरूपित किया गया। 1972 में इस परीक्षण में उर्वरकों को मिलकर हाइड्रोकार्बन प्रणोदित वातन का उपयोग करके जो देशज हाइड्रोकार्बन प्रयोग में लाने वाले सूक्ष्म जन्तुओं की भूजल में वृद्धि करता है निष्कासित कर दिए गए। जलभर में मृदा सूक्ष्म जीव ऐरोमैटिक संयुक्तों के

निम्नीकरण के महत्वपूर्ण हिस्से के लिए जिम्मेदार होते हैं जब भूमि स्थान संदूषित होते हैं। ये सूक्ष्मजीव, बैक्टीरिया, टॉलूईन, इथाइल बेन्जीन और जाइलीन को निम्नीकृत करते हैं। अधिकतम अवमृदा देशज सूक्ष्मजीव, यदि भूजल में पर्याप्त विलीन ऑक्सीजन हो तो इन संयुक्तों के निम्न स्तरों का जैव निम्नीकरण करते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में भूतल संचय कक्षों से निम्न आण्विक भार के ऐरोमैटिक कम्पाउंड ने च्यवित होकर मृदा और भूजल को प्रदूषित कर दिया है।

भारी धातु-प्रदूषित स्थल

कार्बनिक संयुक्तों के अलावा जैव उपचारण का उपयोग भारी धातुओं या रेडियो एक्टिव न्यूक्लाइड से संदूषित स्थल के उपचार में किया जा सकता है। सूक्ष्मजीवी-शैवाल, जीवाणु और कवक साथ ही उच्च पादपों में इन प्रदूषकों के उद्वाह की क्षमताएं होती हैं। उद्वाह के पश्चात् ये या तो इनमें संचित हो जाते हैं या स्वांगीकृत हो जाते हैं। संचित भारी धातु पुनः चक्रण द्वारा पुनः प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए जूलीआ रेमीगेरा ताम्र और केडमियम की 300 और 100 मिग्राम धातु प्रति ग्राम शुष्क भार के स्तर तक अधिशोषित करता है। स्यूडोमोनास पुटीडा आर्थोबेक्टर विस्कस और स्ट्रोबेक्टर स्प औद्योगिक बहिष्प्राव से विभिन्न विषैली भारी धातुओं का निष्कासन करते हैं। रेडियोएक्टिव धातु ऐसे यूरेनियम और थोरियम राइजोपस आरहाइजस द्वारा निष्कासित किए जाते हैं तथा पेनीसीलियम क्राइसोजीनम रेडियम को संचित कर सकता है। यीस्ट, सैकरोमाइसीज सेरोविसी यूरेनियम को तनु विलय से संचित करती है।

पादपों द्वारा पर्यावरण शोधन की जैव प्रौद्योगिकी

सूक्ष्म जन्तुओं की भारी धातुओं जैसे Co, Ca, Zn, Mn, CU, Pb, Ni, Hg, Ag इत्यादि अंतर्ग्रहण और संचित करने की योग्यता जानी मानी है। भिन्न जीवाणु कवक (यीस्ट, द्विरूपी साथ ही तांतुक) जैसे सैकरो माइसीज, रोडोटोरूला, ओरीयोबेसीडियम, ओप्पियोस्टोमा, एस्परजीलस, राइजोपस और ट्राइकोडर्मा, कुछ शैवाल और डायटम जैसे थेलोसिओससीरा स्यूडोनाना में इस प्रकार की योग्यता है तथा इनका बहिःप्राव

निराविषीकारकों की तरह जैव प्रौद्योगिकी में अध्ययन किया जाता है। संवहन पादपों में कुछ जलीय अपतृण जैसे साल्विनिया, लेमना, एजोला, एकोर्निया की जातियां, प्रतृण तथा वृक्ष जातियां भी भारी धातुओं और अन्य अविषाक्त को अपनी कोशिकाओं में अन्तर्ग्रहीत और संचित भी कर सकते हैं। सूक्ष्म जन्तुओं के अलावा पादपों का भी पर्यावरणीय परिशोधक के रूप में अध्ययन किया जाता है। हरे पौधे में प्रकाश संश्लेषण द्वारा ऑक्सीजन बनाने की अद्वितीय क्षमता होती है जिसके कारण इन्हें 'प्रकृति के फेफड़ों' की संज्ञा दी जाती है क्योंकि ये ऑक्सीजन को पर्यावरण में उत्सर्जित करके वायु का शुद्धिकरण करते हैं।

मृदा से भारी धातुओं की पुनः प्राप्ति

हरे पादप जैसे भारतीय सरसों ब्रेसिका जनसीया का विशेष विभेद भारी धातुओं को संचित कर सकता है जब क्रोमियम संदूषित मृदा में वृद्धि होता है। इस पादप के रूपांतरित विभेद दर्शाए गए हैं जो अपने जीवभार का 40 प्रतिशत भारी धातुओं जैसे सीसा और क्रोमियम की तरह संचित करते हैं। न्यूजर्सी संयुक्त राज्य अमेरिका में अनुसंधायकों ने 1994 में विभिन्न क्षेत्रों का परीक्षण किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि पादप सुरक्षित रूप से क्रोमियम संदूषित मृदा लिबर्टी स्टेट पार्क न्यूजर्सी के निकट स्थल पर उग सकते हैं। थोड़ी मात्रा में क्रोमियम पादपों द्वारा ग्रहण कर लिया जाता है और मृदा से निष्कासित हो जाता है। पादप फिर शस्य कर दिये जाते हैं और धातु पुनः चक्रण या व्यवस्था के लिए पुनः प्राप्त होते हैं। इन भारतीय पादपों का उपयोग बर्ट डी. एन्सले फाइटेटेक कॉर्पोरेशन, मेनमाऊथ जंक्शन न्यूजर्सी, संयुक्त राज्य अमेरिका में इल्या रस्किन तथा उनके सहयोगियों के साथ मिलकर रटगर्स विश्वविद्यालय न्यूब्रनसविक न्यूजर्सी संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा विकसित किया गया।

पादप उपचारण

यद्यपि पादप उपचारण का लम्बा इतिहास है परन्तु इसके औद्योगिक अनुप्रयोग नए हैं। "पादपों के उपयोग द्वारा नगरपालिका या औद्योगिक अपशिष्टों से संदूषित मृदा या भूजल से खतरनाक पदार्थों की पुनः प्राप्ति का प्रक्रम पादप उपचारण कहलाता है।"

भविष्य दृष्टिकोण

विभिन्न अनुप्रयोगों के साथ प्रदूषित पर्यावरण परिशोधन और अपशिष्ट उपचार करने में जैव उपचारण का एक आशाजनक भविष्य है। भौतिक परिशोधन तरीके के मुकाबले, स्वस्थाने जैव उपाचरण (in site bioremediation) अत्यधिक कम खर्चीला है और कम पर्यावरणीय क्षोभ करता है। यह निर्माण प्रचालन पद्धतियों, ईंधन उत्पादन और संयोजन, व्यक्तियों के अपशिष्टों के व्यवस्था के तरीके, उत्पादों के मूल्य और पर्यावरणीय गुणता को बदल सकता है।

इसके अलावा कई अनुप्रयोगों में जैव उपाचरण प्रभावी तरीके से कार्य में लगाने के लिये दोनों भावी R and D और सरकारी नीतियों के स्पष्टीकरण की आवश्यकता होती है। विशेषकर आनुवांशिक अभियांत्रिक जन्तुओं के उपयोग में। अधिकतर यूरोपी देशों तथा संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान में कानून है जो आनुवांशिक अभियांत्रिक सूक्ष्म जन्तुओं को जानबूझकर उपयोग पर रोक लगाता है। जैव उपचारण, जैसे

एग्जॉन, वाल्डेज तेल अधिप्लावन में सूक्ष्मजीवों के द्वारा संदूषित तट रेखाओं का उपचार, देशज, सूक्ष्म-जन्तुओं पर और साधारण पर्यावरणीय रूपान्तरण जैसे पोषण अनुप्रयोगों और वातन पर विश्वास करता है। जैव उपचारण के नये और उभरते अनुप्रयोग संयुक्त राज्य अमेरिका के मुकाबले जापान और यूरोप में भिन्न है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में अनुसंधान संदूषित स्थलों के जैविक उपचारक के लिये मूल्य प्रभावी उपचारों के विकास के योगदान का वादा करते हैं। यह नई जैव प्रौद्योगिकी संदूषित मृदाओं और जल को पुनः प्रयोग के योग्य बनाती है। जापानी अनुसंधान उन्नत भू-मण्डलीय पर्यावरणीय गुणता के लिये अन्वेषण और ऊर्जा आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को योग्य रूप से जोड़ सकते हैं। भूमण्डलीय उष्णता कम करने के उनके प्रयत्न, यदि सफल हो जाये तो इसके दूरगामी प्रभाव होंगे। सूक्ष्मजीव द्वारा उत्पादित हाइड्रोजन ईंधन प्रदूषण निवारण के लिये जैव उपचारण का महान उपयोग होगा जो न केवल पेट्रोरसायन और स्वचालित यंत्र उद्योगों में बल्कि विश्वव्यापी अर्थव्यवस्था में भी क्रांति लायेगा।



CLASSES

जलवायु परिवर्तन (CLIMATE CHANGE)



भूमिका

वर्तमान विश्व का सर्वाधिक चर्चित और सर्वाधिक प्राथमिकता वाले विषयों में जलवायु परिवर्तन एक प्रमुख स्थान रखता है। यह अत्यधिक संवेदनशील और गत्यात्मक विषय है। यूं तो जलवायु एक ऐसा तत्व है जो बहुत सारे तत्वों को समाहित करके बना है और इसीलिए यह प्राकृतिक रूप से सदैव परिवर्तनशील रहता है। विश्व में वर्तमान जलवायु का जो प्रतिरूप स्थापित है वह पहले ऐसा नहीं था इसको विद्वानों ने और वैज्ञानिकों प्रमाणों ने सिद्ध भी किया है। पृथ्वी के बाहर भी जलवायु में हमेशा बदलाव देखा जा सकता है। जैसे- मंगल में पहले जीवन होने की बात कही जाती है और यह सर्वविदित है कि उसका वर्तमान भूत से एकदम अलग है। सूर्य भी कभी-कभी अपने आप में तापमान को लेकर विभिन्नता प्रदर्शित करता है जिसके परिणाम स्वरूप पूरे सौर्य मण्डल के जलवायु प्रक्रम में परिवर्तन आ जाता है। इस प्रकार जलवायु अपनी प्रकृति में एक परिवर्तनशील तत्व है।

अब प्रश्न यह उठता है कि जब जलवायु परिवर्तन एक प्राकृतिक फेनामेना है तो इसको लेकर वैश्विक बहस क्यों हो रही है। इसको जानने के पहले ये जानना जरूरी है क्या? जैसे कि उपर्युक्त पैराग्राफ में बताया गया है कि जलवायु कई तत्वों के शनिग्रह का परिणाम है अर्थात् जलवायु किसी क्षेत्र में लम्बे समय के लिए तापमान, आर्द्रता, वायुमण्डली दाब, वायु, वर्षा, वायुमण्डलीय कण तथा अन्य मौसम विज्ञान संबंधी चरों के विभिन्नता के औसत प्रतिरूप का मापदण्ड है। यहां पर यह जान लेना आवश्यक है कि जलवायु, मौसम से भिन्न अवस्था

है। मौसम किसी स्थान की समकालिक व्याख्या करता है। अब ये समझना आसान होगा कि जलवायु न सिर्फ मानव समुदाय के लिए बल्कि समस्त जड़ और चेतन जगत के लिए भी कितना महत्वपूर्ण। वर्तमान पृथ्वी की व्यवस्था वह चाहे जीव-जन्तुओं की व्यवस्था हो या मानवीय व्यवस्था हो जलीय, स्थलीय और वनस्पतिक सभी जलवायु का ही परिणाम है और अगर जलवायुवीय तंत्रों में परिवर्तन होता है तो संपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन होगा, क्योंकि वर्तमान व्यवस्था इतनी संवेदनशील है कि अगर वैश्विक तापमान में 1-2 सेंटीग्रेट भी परिवर्तन हुआ तो समूचे पृथ्वी में समस्त जैव और अजैव जगत का विनाश शीघ्र संपन्न होगा। आज हम समझ चुके होंगे कि जलवायु परिवर्तन का अध्ययन वैश्विक जगत के लिए क्यों आवश्यक है।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या जलवायु में परिवर्तन हो रहा है अगर हां, तो कैसे? कौन जिम्मेदार है इस परिवर्तन के लिए? प्रकृति स्वयं या मानव, या दोनों? इसके क्या परिणाम होंगे? इसे दूर किया जा सकता है या नहीं, तो कौन से उपाय होंगे जिससे इस परिवर्तन को रोका जा सकता है। इन्हीं सभी मुद्दों पर विस्तृत रूप से अगले पन्नों में चर्चा करने का प्रयास किया गया है।

वर्तमान परिवर्तन के बारे में चर्चा करने से पहले यह देखते हैं कि क्या पृथ्वी में पहले भी जलवायु परिवर्तन हुए हैं। इस प्रकार के किसी भी क्षेत्र में जलवायु के परिवर्तन के ऐतिहासिक अनुक्रम को 'जलवायु कालानुक्रम' कहते हैं। जे.ई. हब्ब महोदय ने इस प्रकार के अध्ययन ये प्रमाणित किया कि 'पृथ्वी के

इतिहास में जलवायु परिवर्तन हुए हैं और अब भी हो रहा है। कभी-कभी ये परिवर्तन एक चक्र की तरह होता है तब इस परिवर्तन को जलवायु चक्र कहते हैं। हिमकाल की वैश्विक घटनाएं इस चक्र को प्रमाणित करती हैं।

| हिमकाल | आगमनकाल (मिलियन वर्ष पूर्व) |
|-------------------------------------|----------------------------------|
| पूर्व-कैम्ब्रियन हिमकाल | 850-600 |
| आर्डोविसियन हिमकाल | 450-430 |
| कार्बोनिफेरस हिमकाल | 300 |
| प्लीस्टोसीन हिमकाल | 2-3 |
| (सर्वाधिक चर्चित एवं अन्तिम हिमकाल) | |

इससे ये प्रभावित होता कि विगत पृथ्वी के इतिहास में भी जलवायु परिवर्तन हुए हैं जब मानव की उत्पत्ति भी नहीं हुई थी। सामान्य तौर पर ये आम धारणा होती है कि जलवायु परिवर्तन त्वरित होता है लेकिन ये सदा सत्य नहीं जुरैसिक युग में अचानक जलवायु परिवर्तन के प्रमाण मिले हैं, जिससे जलवायु के अचानक सर्द होने से डायनासोर की सामूहिक विलोपन हुआ था। जुरैसिक युग में जलवायु के अचानक परिवर्तन होने के कारण में यह बताया जाता है कि विशालकाय उल्का पिण्ड के पृथ्वी में टकराने से उत्पन्न अपार धूल कणों से सूर्यातप की मात्रा में भारी कमी से पृथ्वी की जलवायु सर्द हो गयी।

वर्तमान समय में वैश्विक मानव समाज मौसम संबंधी दशाओं में प्रतिवर्ष होने वाले परिवर्तनों एवं उतार-चढ़ाव को लेकर निकट भविष्य में संभावित जलवायु परिवर्तनों को लेकर चिन्तित हैं। पिछली शदी का अन्तिम दर्शक (1991-2000) विश्व के लिखित तापमान के इतिहास का सर्वाधिक गर्म दशक रहा है तथा वर्ष 2005 सर्वाधिक गर्म वर्ष रहा। सन् 2004-05 में वैश्विक स्तर पर बर्फ-बारी का होना भी मौसम के मिजाज बदलने की चेतावनी है। वर्तमान विश्व के सामने सबसे बड़ी पर्यावरणीय समस्या है। वास्तव में आज मानवीय क्रियाओं से, वन विनाश, ग्रीन हाउस गैसें, तीव्र विकास, ओजोन क्षय आदि के परिणामस्वरूप संभावित जलवायु परिवर्तन की चिन्ता एक बड़ी समस्या बनी हुई है। क्योंकि ऐसा विश्वास किया जा रहा है इस मानवीय क्रियाओं से वैश्विक तापमान में वृद्धि होगी तो जलवायु में स्थानीय, प्रादेशिक और वैश्विक परिवर्तन होगा

जिसके परिणाम भयावह होंगे। उदाहरण: वैश्विक तापन के कारण हिमानी, एवं हिमकैपों के पिघलने की दर में वृद्धि होगी जिससे सागर तल में वृद्धि होगी जिससे द्वीपीय देशों जलमग्न हो जायेंगे तटीय क्षेत्र भी जलमग्न होंगे वायुमण्डली गतिविधियों में भारी फेरबदल होगा जिससे पूरा पारिस्थितिक तंत्र प्रभावित होगा। इसलिए जलवायु परिवर्तन का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

जलवायु परिवर्तन के संकेत या प्रमाण

हम कैसे जानते हैं कि धरती गर्म हो रही है?

वैज्ञानिकों द्वारा विस्तृत रूप से लगभग 1880 से पृथ्वी के सतह के तापमान का आंकलन या मापन कर रहे हैं और यह लगातार उन्नत ही हुआ आने वर्तमान में भी यह स्थल और जलीय भागों को मिलाकर लगभग हजारों स्थानों का तापमान मापन हो रहा। विभिन्न शोध संगठनों जैसे नासा का अंतरिक्ष अध्ययन के लिए गोडार्ड संस्थान, जलवायु परिवर्तन के लिए ब्रिटेन का हैडली केन्द्र, जापान मौसम विज्ञान एजेंसी आदि ने पृथ्वी के लम्बे समय के सतह के तापमान के परिवर्तन को प्रस्तुत करने के लिए इसी कच्चे आंकड़ों का उपयोग करते हैं। ये सभी संगठन बहुत ही सावधानी पूर्वक इस बात को ध्यान में रखकर मापन करते हैं कि कोई भी अन्य वस्तु इस मापन को प्रभावित न कर पाये जैसे शहर का धीरे-धीरे बढ़ता तापमान आदि। इन सभी के विश्लेषण से मालूम पड़ता है कि पिछले 100 वर्षों के दौर पृथ्वी का औसत तापमान में 0.8°C (1.4°F) वृद्धि हुई। इसमें से सर्वाधिक वृद्धि अन्तिम 35 वर्षों में देखी गयी। तापमान की यह वृद्धि अगर हम रोजमर्रे के तौर पर या मौसमी तौर पे सोचें तो यह मामूली है लेकिन पूरे ग्रह के लिए एक महत्वपूर्ण बदलाव है। एक उदाहरण पर विचार करें- 0.8°C का तापमान वाशिंगटन डिग्रीसेंटीग्रेट और दक्षिण कैरोलिना में अवस्थित चार्लेस्टोन के बीच के औसत वार्षिक तापमान के अन्तर से ज्यादा है जो एक-दूसरे से 450 मील दूर हैं। इसमें भी विचार करें कि हिमकाल और वर्तमान के औसत वार्षिक तापमान में केवल 50°C का ही अन्तर का आकलन किया गया है। सतह के तापमान के अलावा अन्य क्षेत्र के तापमान मापन में बहुत ही सावधानी बरती गयी। जैसे- समुद्र के सतह के नीचे तापमान, लवणता और धाराओं को मापने के लिए विभिन्न यंत्रों का प्रयोग किया जा रहा है। वेदर बैलून (Weather Ballons) वायुमण्डल के तापमान, आर्द्रता और

आकलन कर रहा है। वैश्विक पर्यावरणीय परिवर्तन के अध्ययन में उस समय एक महत्वपूर्ण सफलता एवं क्षमता का विकास हुआ जब 1970 के दशक में सुदूर संवेदन (Remote Sensing) की शुरुआत हुई। ये उपग्रह सतह के यंत्रों से ज्यादा विविधता पूर्वक तापमान का आकलन करते हैं। इसके अलावा वैश्विक तापन के अन्य बहुत से संकेत हैं जैसे ऊष्मीय तरंगों की आवृत्ति बढ़ती जा रही है, शीत का आकस्मिक काल छोटा मध्यम, उत्तरी गोलार्द्ध में वर्ष और स्नो (Snow) क्षेत्रों में कमी, पूरे विश्व के ग्लेशियर पिघल रहे हैं, बहुत से पादप और जन्तु ठण्डे क्षेत्रों या उत्तरी अक्षांशों की ओर स्थानान्तरित हो रहे हैं, क्योंकि जहां वर्तमान में है वहां का तापमान उनके लिए अधिक है तो इन सभी आंकड़ों से जो तस्वीर उभर कर सामने आती है उससे स्पष्ट है कि पृथ्वी गर्म हो रही है।

हम कैसे जानते हैं कि हरित गृह गैसों वर्तमान ताप वृद्धि के लिए उत्तरदायी हैं?

वैज्ञानिकों ने 1820 के शुरुआती दौर से ही पृथ्वी तथा पृथ्वी के वायुमण्डल में हरित ग्रह गैसों को तापमान नियंत्रण में भूमिका को स्वीकारने लगे थे जिनमें CO_2 , CH_4 , N_2O और H_2O आदि पृथ्वी के वायुमण्डल में एक कम्बल की भांति काम करते हैं। ये गैसें पृथ्वी में समस्त जीवन प्रणाली के लिए पर्याप्त तापमान को बनाए रखती हैं। दरअसल सूर्य से प्राप्त ऊष्मा जब पृथ्वी के सतह से टकराती है तो ऊष्मा का कुछ भाग पृथ्वी अंतरिक्ष में सीधे परावर्तित कर देती है, कुछ मात्रा स्थल एवं जलीय भागों द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है, लेकिन इस अवशोषित मात्रा को पृथ्वी द्वारा किसी न किसी रूप में वापस करना होता है। तापमान के संतुलन को बनाये रखने के लिए, क्योंकि अगर अवशोषित मात्रा को वापस नहीं किया जायेगा तो धीरे-धीरे पृथ्वी का तापमान बढ़ता चला जायेगा और परिणाम यह होगा कि पृथ्वी पर जीवन समाप्त हो जायेगा। अब पृथ्वी द्वारा निष्कसित ऊष्मा को 'पार्थित विकिरण' के नाम से जाना जाता है। यह विकिरण वायुमण्डल में उपस्थित हरित गैसों अवशोषित कर लेती है जिससे वायुमण्डल पर्याप्त गर्म हो जाता है और पृथ्वी पर जीवन के लिए यह आदर्श तापमान की दशा होती है। अब इसके विपरीत इन हरित गैसों की अनुपस्थिति में पार्थित विकिरण सीधे अंतरिक्ष में चला जाता है जिससे पृथ्वी का वायुमण्डल पर्याप्त गर्म नहीं

रह पाता और पृथ्वी के वायुमण्डल का तापमान जमाव बिन्दु पर पहुँच जाता तो भी पृथ्वी पर जीवन संभव नहीं था। कहने का आशय ये है कि हरित गैसों की अनुपस्थिति में पृथ्वी पर दिन और रात में दो चरम अवस्थाएं होती जिससे जीवन संभव न होता अर्थात् हरित गैसों की मात्रा में संतुलन है। लेकिन वर्तमान समय में मानकीय क्रियाओं द्वारा वायुमण्डल में हरित गैसों की मात्रा में वृद्धि हो रही है जिससे पृथ्वी की सतह का तापमान बढ़ी रहा है।

हम कैसे जानते हैं कि मानव हरित गैसों की वृद्धि का कारण है?

विवेकी मानवीय प्रभाव द्वारा ग्रीन हाउस गैसों की सांद्रता को चुनौती मिल रही है क्योंकि वायुमण्डल में प्राकृतिक रूप से पहले ही हरित गैसों पायी जाती हैं। कार्बन डाई-ऑक्साइड जो कार्बन चक्र का एक महत्वपूर्ण भाग है जो कई महत्वपूर्ण प्राकृतिक प्रक्रियाओं को उत्पादित एवं उपभोग करता है। जब से मानव ने लम्बे समय से दबे कार्बन को खोदना शुरू किया (जैसे- कोयला, तेल) और उनको जलाना और दहन किया ताप से वायुमण्डल में अतिरिक्त CO_2 शामिल होने लगी। अन्य मानवीय क्रियाएं जैसे सीमेन्ट उत्पादन और वनों पेड़ों को और जंगलों को आग लगाना आदि से भी वायुमण्डल में CO_2 बढ़ने लगी।

1950 तक अधिकतर वैज्ञानिकों का यह मानना था जो भी मानवीय क्रियाओं से CO_2 निकलती है वह अधिकांश मात्रा में समुद्र द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है तब से लगातार वैज्ञानिक शोध पेपर प्रकाशित हो रहे हैं। ये देखने के लिए या परीक्षण करने के लिए की वायुमण्डल और समुद्र के बीच कार्बन का क्या संबंध है और परिणाम निकला कि समुद्र निष्कासित CO_2 की अधिकांश मात्रा को अवशोषित नहीं करता। इस अवधारणा के परीक्षण के लिए 'कारलेस डेविड कीलिंग' (Charles Darid Keeling) ने हवाई द्वीप में अवस्थित 'मोना लोआ अवजरवेटरी' (अमेरिका) में वायु से कार्बन नमूनों को एकत्रित करने लगे। आज इस तरह के परीक्षण के केन्द्र पूरे विश्व में अलग-अलग स्थानों पर स्थापित हो रहे हैं। आंकड़े ये बताते हैं कि वायुमण्डल में CO_2 की मात्रा बढ़ रही है।

इस तरह आधुनिक मापन के पहले CO_2 के सांद्रण को कैसे निर्धारित किया गया? तो वैज्ञानिकों ने ग्रीन लैण्ड और अंटार्कटिका के आइस कोर में फंसी वायु के बुलबुले की संरचना और संघटकों में अध्ययन किया। ये आंकड़े कम से कम 2000 वर्ष पहले को प्रदर्शित करते हैं। औद्योगिक क्रांति के बाद CO_2 धीरे-धीरे बढ़ने लगी थी और बाद में लगभग 1800 अन्तिम काल तक तीव्र गति से। आज वायुमण्डल में CO_2 की सांद्रता 390 पार्ट्स पर मिलियन है जो औद्योगिक क्रांति के पहले से यह लगभग 40 प्रतिशत अधिक है।

मानवीय क्रियाओं ने अन्य महत्वपूर्ण गैसों की सांद्रता भी वायुमण्डल में बढ़ा दी है जैसे- मीथेन जो जीवाश्म ईंधनों के जलने से मवेशी की वृद्धि से, प्राकृतिक गैस के परिवहन और उत्पादन से और अन्य क्रियाओं से। इसके अलावा नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) 1750 से लगभग 150 प्रतिशत की वृद्धि जो मुख्यरूप से कृषि में ऊर्वरकों के उपयोग से साथ में जीवाश्म ईंधनों से भी। कुछ औद्योगिक रसायन जैसे- क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) हरित गैसों में महत्वपूर्ण है और जो वातावरण में लम्बे समय से है क्योंकि यह प्राकृतिक रूप से नहीं पाई जाती, इसकी वृद्धि को मानवीय क्रियाओं का निःसंदेह जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

वैज्ञानिकों ने प्रत्येक वर्ष कि मात्रा में तेल, कोयला और प्राकृतिक गैस के दहन से वायुमण्डल में प्रत्यक्ष रूप से CO_2 की मात्रा को जोड़ देते हैं। इसका पूरा दस्तावेज तैयार किया है। वैज्ञानिकों ने समुद्र और स्थलीय भाग के द्वारा औसत रूप कितनी मात्रा CO_2 की अवशोषित कर ली जाती है, का भी दस्तावेज तैयार किया है। विश्लेषण यह प्रदर्शित करते हैं कि वर्तमान में विद्यमान CO_2 का 45 प्रतिशत मानवीय क्रियाओं का योगदान है।

हरित गैसों का प्रभाव

1824 में, सर्वप्रथम फ्रांस के भौतिक विज्ञानी 'जोसेफ फ्यूरियर' ने यह सुझाव दिया कि वायुमण्डल ऊष्मारोधी का कार्य करता है। यह पदले सुझाव जो बाद में हरित तह प्रभाव के रूप में जाना गया। 1850 में आइरिस मूल के भौतिक विज्ञानी 'जॉन टायनडल' ने पहली बार कहा कि पृथ्वी द्वारा विकीर्णित ऊष्मा को वायुमण्डल में उपस्थित जल वाष्प और अन्य गैसों अवशोषित (स्वातने अर्हैनियस) पहली बार CO_2 को हरित ग्रह गैस

तापमान के लिए प्रमुख रूप से गणना की। उनके इस गणना से उन्होंने यह पूर्वानुमान किया कि मानवीय क्रियाएं वायुमण्डल में CO_2 की मात्रा बढ़ी रहती हैं जिससे वैश्विक तापन संभव होगा।

कितनी मानवीय गतिविधियां पृथ्वी को गर्म कर रही हैं?

वायुमण्डल को गर्म करने में हरित गैसों एक फोरसिंग एजेंट का कार्य करती हैं क्योंकि इनकी क्षमता ग्रह के तापमान को ऊपर-नीचे करने में प्रबल हैं। इन ग्रीन हाउस गैसों की अलग-अलग तापमान धारण करने की क्षमता है। जैसे- मीथेन के लिए अणु 25 बार गर्म होने की शक्ति हो तो CO_2 को एक अणु की तुलना में। फिर भी CO_2 के तापमान का प्रभाव मीथेन से ज्यादा समय के लिए होता है क्योंकि यह वायुमण्डल अधिक मात्रा में और लम्बे समय के लिए रहता है। कुछ फोरसिंग एजेंट पृथ्वी के ऊष्मा संतुलन को शीतलन की ओर प्रेरित करते हैं। कुछ हरित गैसों के साथ तापमान में समायोजन करते हैं। उदाहरण के लिए कुछ एयरोसॉल (वतिलयन) जो बहुत छोटे तरह या ठोस कण होते हैं। वायुमण्डल में तैरते रहते हैं। शीतलन प्रभाव डालते हैं क्योंकि सूर्य से आने वाली सूर्य प्रकाश को अंतरिक्ष में वापस भेज देते हैं। मानवीय क्रियाएं जैसे जीवाश्म ईंधनों के दहन से वायुमण्डल में एरोसॉल के कणों में वृद्धि करते हैं। इनकी वृद्धि शहरी क्षेत्रों में ज्यादा होती है।

जब सभी मानवीय और प्राकृतिक फोरसिंग एजेंट को मिलकर विचार किया गया तो वैज्ञानिकों ने यह गणना की कि जलवायु 1750 और 2005 के बीच पृथ्वी को तापमान की ओर ही खींचा है। पृथ्वी सतह का गणना द्वारा 1.6 वाट्स प्रति मी² ऊर्जा अतिरिक्त है। जब इसे पृथ्वी के क्षेत्रफल से गुणा किया गया तो 800 ट्रिलियन वाट्स होता है, यह प्रतिवर्ष के आधार पर विश्व के सभी ऊर्जा संयंत्रों को मिला दे तो भी उनके उत्पादन का 50 गुना से भी अधिक है। यह अतिरिक्त ऊर्जा पृथ्वी के जलवायु तंत्र में प्रतिदिन के प्रत्येक सेकेण्ड जुड़ जाती है। वार्मिंग की कुल मात्रा का निर्धारण जलवायु में पायी जाने वाली विभिन्न फीडबैक के द्वारा की जाती है। जिसे उदाहरण के लिए, अगर पृथ्वी गर्म हो रही है तो ध्रुवीय बर्फ और स्नो पिघलेगी, जब उष्मा बढ़ेगी तो जल और स्थल का रंग ऊष्मा अवशोषण के बाद और गाढ़ा हो जायेगा। अन्य महत्वपूर्ण फीडबैक में जलवाष्प है।

वायुमण्डल में जलवाष्प की मात्रा में बढ़ोत्तरी होगी यही समुद्र के सतह पर भी और वायुमण्डल के निचले पर्त में स्पष्ट रूप से दिखेगा। अगर तापमान में 1°C की वृद्धि होती है तो जलवाष्प में 7 प्रतिशत की वृद्धि होगी।

यह हम कैसे जानते हैं कि वर्तमान तपन में सूर्य का कोई योगदान नहीं?

एक विज्ञान सिद्धांत के परीक्षण के लिए दूसरा तरीका जांच वैकल्पिक व्याख्या है क्योंकि सूर्य का पृथ्वी के तापमान पर बहुत गहरा प्रभाव है। वैज्ञानिक सूर्य निष्कासित ऊर्जा के बदलते स्वरूप का अध्ययन यह निर्धारित करने के लिए किया कि पृथ्वी के तपन में इसका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। अधिकतर मापन का आकलन प्रत्यक्ष रूप से उपग्रहीय आंकड़ों पर आधारित है जो 1979 से उपलब्ध हो रहे हैं। ये उपग्रहीय आंकड़े यह प्रदर्शित कर रहे हैं कि सूर्य द्वारा पिछले 30 वर्षों में निष्कासित ऊर्जा की कोई शुद्ध वृद्धि नहीं प्रदर्शित हो रही है और इसीलिए सूर्य को उस समय के तापन के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।

उपग्रहों (Satellite) के काल के पहले, सूर्य द्वारा निष्कासित ऊर्जा का मापन अप्रत्यक्ष तरीकों से होता था, जैसे कि सूर्य धब्बों या कलंकों की संख्या जो प्रतिवर्ष के आधार पर, इन अप्रत्यक्ष अध्ययन के तरीकों से यह सुझाया गया कि 20वीं शताब्दी में तापमान में बहुत मामूली वृद्धि हो सकती है। यह वृद्धि इस समय के लिए वैश्विक तापन में योगदान दे सकती हैं, लेकिन इस आकलन के द्वारा 20वीं शताब्दी के बाद के तापन की व्याख्या नहीं की जा सकती। आगे के प्रभावों में वर्तमान तापन के लिए वायुमण्डल के किसी भी परत में सौर्यिक परिवर्तन का कोई भी योगदान नहीं पाया गया। इसके जांच के लिए दो आंकड़ों का संकलन दो स्रोतों से किया गया। मौसम गुब्बारे- जिनको 1950 दशक से पूरे विश्व के 100 से भी अधिक स्थानों से दिन में दो बार छोड़ा जाता था और इसका उपग्रह स्रोत जो 1970 के दशक से वायुमण्डल के विभिन्न पर्तों के तापमान की निगरानी कर रहे हैं। दोनों स्रोतों के आंकड़ों को गहराई से देखा गया तो ये पाया गया कि इसका प्रतिरूप उम्मीद के अनुरूप बिल्कुल वैसा ही है जैसे कि ग्रीन हाउस गैसों के बढ़ने से पृथ्वी के सतह के नजदीक अवशोषित ऊर्जा से यह स्रोत वायुमण्डल के ऊपरी और

निचली पर्तों के क्रमशः तापन और शीतल के प्रतिरूप के प्रदर्शित करते हैं। अब अगर वर्तमान तपन की प्रवृत्ति को उत्पादित सौर्यिक ऊर्जा को जिम्मेदार माना जाये तो वायुमण्डल में इस प्रवृद्धि को लम्बवत् समानता दिखनी चाहिए, जो कि ऐसा नहीं है।

हम कैसे जानते हैं कि वर्तमान तपन प्रवृत्ति प्राकृतिक चक्र की वजह से नहीं?

जलवायु की प्रवृत्ति को पूरी तरह से आंकड़ों के माध्यम से आकलित किया जा रहा है जहां कि बहुत सारे चर हैं जैसे कि तापमान, आर्द्रता, वर्षा और अन्य जलवायुवीय चर आदि। ये सभी प्राकृतिक कारक लाखों वर्षों पहले विभिन्न प्रक्रियाओं और लम्बे समय अन्तरालों के शीतलन और तपन प्रतिरूप के चले संघर्ष का परिणाम है। उन सभी में अल-नीनों और ला-निना उष्णकटिबंधीय प्रशांत महासागर में प्राकृतिक अल्पकालिक जलवायु के शीतल और ऊष्मन के उतार-चढ़ाव सबसे अच्छा उदाहरण है। प्रभावी अल-नीनो और ला-नीनो की घटनाएं इस ग्रह के विभिन्न भागों में तापमान और वर्षा के प्रतिरूपों के बदलाव से संबंधित है। इस घटना को मौसम के कई चरम अवस्थाओं से जोड़कर देखा जाता है, जैसे- 1992 में मध्यपूर्व के देशों में बाढ़, 2006 और 2007 में दक्षिण पूर्वी राज्यों में गंभीर सूखा आदि। अल-निनों के दौरान वैश्विक रूप से तापमान में वृद्धि होती है, जैसा कि 1998 में, और ला-नीना के दौरान तापमान में कमी, जैसे कि 2008 में। हालांकि ये उतार-चढ़ाव 20वीं शताब्दी की तपन प्रवृत्ति से छोटे हैं। लम्बी अवधि के रिकार्ड में 2008 अभी भी काफी गर्म वर्ष था।

प्राकृतिक जलवायु विविधताएं भी सूर्य के चारों ओर पृथ्वी की कक्षा में धीमी गति परिवर्तन को प्रेरित कर सकती हैं जो पृथ्वी द्वारा प्राप्त सौर्यिक ऊर्जा को प्रभावित कर सकती है जैसे कि हिमकाल की घटना के साथ हुआ था या वायुमण्डल में ज्वालामुखी के निष्कारण के द्वारा लघु काल के लिए परिवर्तन। 1919 में, माउण्ट पिनाटुबो के भारी विस्फोट के कारण समतापमण्डल में बहुत अधिक मात्रा में ज्वालामुखी पदार्थ जमा हो गये थे जिसमें परिणाम यह हुआ पृथ्वी को तुलनात्मक रूप से ठण्डा कर दिया। यद्यपि सतह का तापमान फिर से 2-5 वर्ष के बीच अपनी पुरानी व्यवस्था में आ गया जब ये पदार्थ वायुमण्डल के बाहर व्यवस्थित हो गये। 20वीं शताब्दी के

तापमान आंकड़े बताते हैं कि इस तरह के अल्पकालिक शीतलन प्रभाव बहुत से ज्वालामुखी के विस्फोटों के बाद देखने को मिला। उसी तरह के कुछ तापमान की विविधताएं विभिन्न प्रबल अल-नीनों और ला-नीना को जोड़कर देखा जाता है। लेकिन एक समग्र तपन की प्रवृत्ति अभी भी बनी हुई है।

अल-नीनों और ला-नीना की घटनाओं और अन्य अल्पकालिक प्राकृतिक उतार-चढ़ावों की प्रवृत्ति के परिपेक्ष में जलवायु वैज्ञानिक दशकों और उससे भी अधिक समय के लिए जलवायु प्रणाली पर मानवीय प्रभाव का आकलन करते हैं। उपलब्ध तापमान आंकड़ों की एक कठिन मूल्यांकन, जलवायु प्रेरक आकलन और प्राकृतिक जलवायु परिवर्तनशीलता के स्रोतों के आधार पर वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि 90 प्रतिशत से अधिक संभावना है कि पिछले 50 से 60 वर्षों की वैश्विक तपन की प्रवृत्ति के लिए जीवाश्म ईंधन के दहन तथा उत्सर्जित गैसें तथा अन्य मानवीय क्रिया-कलापों का ही योगदान है।

इस तरह का निर्णय कि वर्तमान वैश्विक तपन में मानवीय गतिविधियों का योगदान है, यह सूचना या निर्णय 'जलवायु मॉडल' से लिया गया है। वैज्ञानिक इस मॉडल का उपयोग इसलिए भी किया कि क्या होता अगर मानव अपनी क्रिया-कलापों से 20वीं शताब्दी में पृथ्वी के जलवायु में परिवर्तन नहीं करता। हो सकता था कि तपन की क्रिया नगण्य होती या बहुत ही धीमी प्रक्रिया से शीतल। जब हरित गैसों के उत्सर्जन तथा अन्य गतिविधियों को इस मॉडल में शामिल करे जिसके परिणाम स्वरूप सतह का तापमान और अधिक समान परिवर्तन मिला।

जलवायु मॉडल

बहुत से दशकों के लिए, वैज्ञानिक पृथ्वी के जलवायु का अनुकरण करने के लिए दुनिया के सबसे उन्नत कम्प्यूटरों का उपयोग किया। ये मॉडल भौतिक के बुनियादी नियमों और गणितीय समीकरणों के श्रेणी पर आधारित हैं जो वायुमण्डल समुद्र और सतह के व्यवहार को निर्धारित करते हैं या निर्देशित करते हैं। जलवायु मॉडल जलवायु के वर्तमान, भूत और भविष्य के अध्ययन के लिए एक अच्छा माध्यम है। जलवायु मॉडल को निरीक्षण या सर्वेक्षण के प्रति जांच की जाती है जिससे वैज्ञानिक अतीत और हाल में क्या हुआ की सही व्याख्या कर सकें।

जलवायु परिवर्तन और प्रभाव (21वीं सदी में और उसके बाद)

हमारे वैज्ञानिकों ने तापमान परिवर्तन की मात्रा की भविष्यवाणी और भविष्य में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन और दुनिया भर में औसत तापमान की कैसी वृद्धि होगी, को समझने में काफी प्रगति की है। तापमान में यह वृद्धि 1°C, 2°C, 3°C, 4°C होगी, यह प्रभावों की एक विस्तृत श्रृंखला से संबंधित है। इन प्रक्षेपित प्रभावों में कई गंभीर जोखिम मानवीय समुदायों और जीवित जीवों जैसे: जल संसाधन, तटीय क्षेत्र, बुनियादी ढांचे, मानव स्वास्थ्य, खाद्य सुरक्षा और स्थल एवं जलीय पारिस्थितिक तंत्र के लिए चिंता की बात होगी।

वैज्ञानिक भविष्य के जलवायु परिवर्तन को कैसे प्रस्तुत करते हैं?

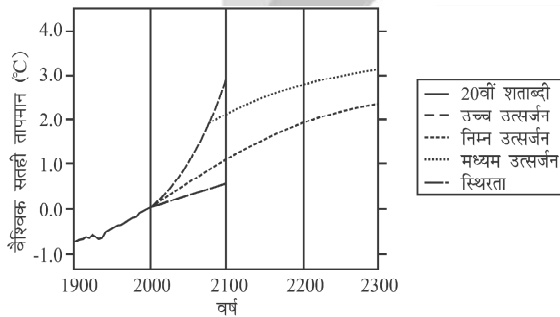
भविष्य के वैश्विक तपन के निर्धारण के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारक CO₂ तथा ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन पर निर्भर करेगा और यह लोगों पर निर्भर है कि वह किस प्रकार ऊर्जा का उत्पादन और उपभोग करते हैं। इसके अलावा देशों की नीतियाँ राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय और नई तकनीकी की उपलब्धता पर भी निर्भर करेगा। वैज्ञानिक भविष्य के ऊर्जा तथा उत्सर्जन के निर्धारण तथा आकलन की कोशिश कर रहे हैं। ये प्रत्येक परिदृश्य आर्थिक, तकनीकी और जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक गतिविधियाँ, ऊर्जा संरक्षण, प्रथाओं, ऊर्जा तकनीक और भूमि उपयोग सहित समय के साथ बदल जायेगा, के अनुमान पर आधारित है।

वैज्ञानिकों ने जलवायु मॉडल का प्रयोग करते हुए यह बताया कि जलवायु किस अपने को प्रदर्शित करेगी। यह ग्रीन हाउस गैसों के सांद्रता पर निर्भर करेगा। प्रत्येक मॉडल वायुमण्डल, समुद्र और जलवायु के अन्य भाग को पुनः प्रस्तुत करने के लिए गणितीय समीकरण का एक अलग सेट का उपयोग करता है। मॉडल को नियमित तार पर एक दूसरे के साथ की गयी भविष्यवाणी और शुद्धता या सत्यता के साथ-साथ मॉडल की मजबूती का भी परीक्षण किया जाता है।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन के प्रस्तुतीकरण के लिए 2005 में पूरा किया गया। अब तक का सबसे व्यापक माडल परीक्षण था इसने विश्व के 23 अलग माडल को समूह में शामिल किया

जिनमें से प्रत्येक में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के परिदृश्यों के एक ही सेट का उपयोग किया। चित्र में तापमान के परिवर्तन को उच्च, मध्यम और मध्यम उच्च, निम्न उत्सर्जन के साथ जोड़ा गया है। यहां भविष्य के तीन लगातार परिदृश्यों के लिए ग्राफ दिया गया है जिसमें शदी के अन्त में वैश्विक औसत तापमान में स्पष्टता दिखाई देती है। 2100 में तापमान की स्पष्ट वृद्धि प्रतीत होती है। 20वीं शताब्दी की तुलना में यह परिणाम बताते हैं कि मानव के निर्णय आने के समय जलवायु परिवर्तन का एक भयावह रूप प्रस्तुत करेगा।

उपरोक्त चित्र में तीन सेनारियों (परिदृश्यों) के लिए तापमान परिवर्तन को दिखाया गया जिसमें ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का तापमान के साथ सीधा संबंध प्रदर्शित हो रहा है।



वर्षा प्रतिरूप में कैसे बदलाओं की संभावना है?

वैज्ञानिकों ने आंकड़ों और माडलों का अध्ययन कर पाया कि वैश्विक तपन पहले से मौजूद व्यवस्था में और अधिक विरोधाभास को तेज करने का कार्य करेगा, अर्थात् जहां भी सूखा और भी अधिक सूखे की स्थिति को प्राप्त करेगा और जहां भी वर्षा है वहां और भी अधिक वर्षा को प्राप्त करेगा। क्योंकि तापमान में वृद्धि से जलीय भागों का वाष्पीकरण में वृद्धि होगी, क्योंकि अगर तापमान में 1°C की वृद्धि हुई तो वायुमण्डल में उपस्थित वायु की जलवाष्प धारण करने की क्षमता में 7 प्रतिशत की वृद्धि होगी। यद्यपि वाष्पीकरण की वृद्धि वायुमण्डल को वर्षा और बर्फबारी के लिए अतिरिक्त आर्द्रता उपलब्ध करायेगा, लेकिन यह उन स्थल भागों और भूमि को और भी सूखा बनायेगा जो वर्षा क्षेत्र से बाहर है।

इसी सामान्य दृष्टिकोण से तापमान के साथ भी उपयोग किया जा रहा है जिसमें वैज्ञानिकों ने वैश्विक तपन में 1°C के

बढ़ने के साथ 5-10 प्रतिशत की वर्षा उन क्षेत्रों में और भी कमी देखी जायेगी जहां अभी भी सूख के स्थिति बनी हुई है। परिणाम यह होगा कि उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र 1°C तापमान की वृद्धि के साथ 5-10 प्रतिशत वर्षा की कमी के साथ और भी अधिक सूखे की मार झेलेंगे। जबकि उपध्रुवीय क्षेत्रों में विपरीत स्थिति होगी। वहां वर्षा की मात्रा बढ़ेगी विशेषकर शीतकाल में।

कैसे समुद्री आइस (ICE) और वर्षा प्रभावित होगी?

इस ग्रह के विभिन्न बर्फ के रूपों में गिरावट देखने को मिल रही है। मॉडल यह संकेत कर रहे हैं कि आर्कटिक महासागर का मौसमी बर्फ इस शदी के अन्त तक बर्फ से मुक्त होने की संभावना है और वैज्ञानिकों ने सुझाव दिया है कि प्रत्येक 1°C के वैश्विक तापमान में वृद्धि से 25 प्रतिशत समुद्री वर्ष की वृद्धि में कमी आयेगी।

आर्कटिक के विपरीत, अंटार्कटिका में पिछले कई दशकों के दौरान समुद्री बर्फ में औसत रूप से वृद्धि देखी गयी है। यह वहि समतापमण्डल में अवस्थित ओजोन पर्त में छिद्र से संबंधित हो सकती है। हालांकि मॉंट्रियल प्रोटोकॉल के बाद इस छिद्र में कमी देखने को मिली है। फिर भी अंटार्कटिका की बर्फ आर्कटिक की तुलना में ज्यादा तेजी से पिघल रही है क्योंकि दक्षिणी गोलार्द्ध महासागर आर्कटिक महासागर की तुलना में अधिक गहराई तक तापमान को अवशोषित किये हुए है।

वहीं स्थलों और पर्वतों के बर्फ के बारे में विद्वानों ने कहा कि कई क्षेत्रों में ठण्ड के दौरान बनी बर्फ वसंत के पहले खत्म होने की स्थिति स्पष्ट दिखाई दे रही है। एक संवेदनशील विश्लेषण के अनुसार स्थायी तापमान के 0.1°C के वृद्धि के साथ पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका की स्थानीय बर्फीले क्षेत्र में 20 प्रतिशत की औसत कमी देखी जा सकती है। ये बर्फीले क्षेत्र जल विद्युत और पीने के लिए पानी के मुख्य स्रोत है। कुछ क्षेत्र जैसे कि साइबेरिया, ग्रीनलैण्ड, अंटार्कटिका जहां लम्बे समय से मौसम पहले से ठण्डा है जिससे बर्फबारी में सहायता होती है। इन स्थानों में बर्फबारी बढ़ने की तीव्र संभावनाएं हैं क्योंकि तापमान वृद्धि से जलवाष्प में वृद्धि से बर्फबारी वृद्धि हो सकती है।

तटीय क्षेत्र कैसे प्रभावित होंगे?

पृथ्वी के सबसे घनी आबादी वाले क्षेत्रों में तटीय क्षेत्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं, समुद्र से कम अर्थात् पे होने की वजह से ही